मलेशिया

इग्लैण्ड

केन्या

न्यूजीलेण्ड

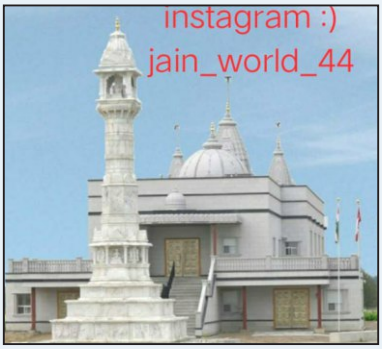

कनाडा

लंदन

धर्म ईश्वर / कर्तव्य की महिमा

जहाँ देव दर्शन हो वहां व्यापार होता है। जहां नवकार एवं मुनियों कि महिमा हो, जहां मुनियों की वाणी हो, वहीं उद्धार होता है। मुझे लगता नहीं नवकार से ऊँचा यहां कोई नहीं, वहां पाप कट जाते है वहां नवकार होता है, न फूलों की कीमत वहां उपवन नहीं होते मन ही हो मरूथल तो सावन नहीं मिलते, जिसमें दिल मन में ईश्वर की सूरत नहीं कोई उसे पत्थर ही दिखते है उसे दर्शन नहीं मिलते।

ध्यान में भटकना जिनकी आदत है वे कभी घर नहीं पाते, गूंगे की तरह वे स्वर नहीं पाते। लिखा है इतिहास में ईश्वर से बढ़कर गुरू होते, निंदा जो करते हैं वो कभी तर नहीं पाते।

जो है प्रकाश पुंज ज्ञान में मन की लौ लगाई है वीतराग ज्ञान अहिंसा ध्यान में, इसलिए जगाई है, संविधान में वर्तमान महावीर का अंतिम अवतार है।

कर्तव्य क्या है ?

कर्तव्य स्वभार की चाबी है और कर्तव्य समाज की ओर झुकता हुआ तराजू है तथा कर्तव्य विश्वास दूसरों की भलाई के लिए होता है तो वह महान होता है। कर्तव्य को तीन तरह से समझ सकते हैं।

1) Relative : कर्तव्य वास्तविकता कहीं ओर बढ़ाता है। इसको हम यह कहते हैं। मन–मंद स्वयं के मन को मजबूत करे, संयम, समता रखते हुए वास्तविकता को समझे। वास्तविक ज्ञान होने पर अपने प्रति क्या कर्तव्य है, समझ और पालन करे।

2) Responsibility : मनुष्य की क्या जिम्मेदारी है, मैं पुत्र हूँ कि मेरे माता–पिता, भाई के रूप में छोटे भाई बहन के प्रति, क्या करना चाहिए उनका कैसे जीवन सुधारा जाए। पिता के नाते–अपनी संतान के प्रति अपना कर्तव्य क्या होता है, समझना है, उनको अच्छे विचार संस्कार, शिक्षा–दीक्षा, रहन सहन के बारे में शिक्षा दी जानी चाहिए।

3) Revolution : दो प्रकार का होता है, शुभ व अशुभ एक उदाहरण देकर स्पष्ट करना चाहूँगा कि एक पुत्र के परीक्षा का परीक्षा परिणाम आया, वह चार विषय में अनुत्तीर्ण रहा, उसने अंक सूची पिताजी को दिखाई, उन्होंने उसको देखा और कहा क्या करना है ? पुत्र ने कहा कि चार विषय में अनुत्तीर्ण। पिताजी, चिन्ता न करे, अगली बार उत्तीर्ण हो जाऊँगा, जीवन समाप्त तो नहीं हो गया। यहां पर दोनों प्रकार से कर्त्तव्य है।

विचारों के अनुसार यदि पिता, अंक सूची देखकर पुत्र को डाँटता–मारता तो यह संभव होता कि वह आत्महत्या कर लेता। लेकिन पिता ने डांटा नहीं वरन पुत्र से प्रश्न किया कि क्या करना है ? तो उसे अनुभव हुआ कि अगली बार उत्तीर्ण हो जायेगा, जीवन समाप्त नहीं हुआ है। यह उत्तर सुनकर, पिताजी मन ही मन प्रसन्न हुए उन्होंने कुछ दिनों पश्चात् एक भोजन का आयोजन किया और काफी रिश्तेदार, मिलने वालो को आमंत्रित किए। तब तक पुत्र के अनुत्तीर्ण होने की बयां सबको विदित हो गई थी, सभी लोगों ने कहा कि सेठ ने किस खुशी में भोजन के लिए आमंत्रित किया है। निश्चित समय आया तब पिता ने एक बग्घी को सजाकर पुत्र के साथ वे उसमें बैठे और पुत्र के गले में एक माला पहना दी। मंच की ओर पहुँच कर पिता–पुत्र उतर गए। स्वाभाविक रूप से सभी ने पूछा कि स्नेहभोज आयोजन का क्या कारण है तब पिता ने कहा कि मेरे पुत्र ने 4 विषय में अनुत्तीर्ण होकर मुझसे कहा कि जीवन समाप्त नहीं हुआ, अगली बार सफलता मिल जायेगी। उत्तर सुनकर वह प्रसन्न हुआ, इसी कारण आपको कष्ट दिया। यह शुभ कर्तव्य है। इसके बाद वह पुत्र अपने जीवन में कभी भी असफल नहीं हुआ।

कर्तव्य प्रार्थना से ऊपर है। कर्तव्य, अपने परिवार, समाज, राज्य व राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य होता है। वर्तमान परिस्थिति में मनुष्य मात्र का कर्तव्य है कि कोई भी प्राणी (मनुष्य, पशु, पक्षी आदि) भूख से न मरे, भूखा न सोए व सभी आवश्यक सुविधा से वंछित न रहे यहीं हमारा कर्तव्य है। अपनी यथा शक्ति से जो भी बन सके अपना कर्तव्य को पूर्ण कर ईश्वर के प्रति आभार प्रकट करते हुए आपको भी सद्गति प्राप्त हो।

आत्म विज्ञान

दृष्टि विज्ञान

आत्म विज्ञान का अर्थ है कि आत्मा का विज्ञान इसका तात्पर्य यह है कि सही दिशा–सही सोच का ज्ञान हो जाए वह वास्तविक ज्ञान कहलाता है। आत्मा क्या है ? कैसी है ? आत्मा एक कण के पुंज का समूह होता है। अर्थात् कई पुद्गल मिलाकर बनता है वही आत्मा है, वही ब्रह्माण्ड है।

इसका स्वरूप इस प्रकार है कि यह स्थिर अदृश्य, नाश्वान तथा यह केन्द्र में स्थित होती है। इसके द्वारा मनुष्य जो भी क्रिया करता है, इस आत्मा के माध्यम से ही करता है। बिना आत्मा के शरीर कुछ भी नहीं है, वह जड़ तत्व हो जाता है। जब तक शरीर में आत्मा है, वह जीवित है अन्यथा मृत हो जाता है, मनुष्य देखता है, खाता है, सुनता है, वह आत्मा के माध्यम से ही होता है। यहां एक उदाहरण देना उचित समझते है कि मनुष्य की आंख देखती है या और कोई भाग देखता है,

यह स्पष्ट करना चाहते हैं, आँख नहीं देखती है, आंखों के माध्यम से आत्मा देखती है। यदि आंख देखती हो तो मनुष्य के मरने के बाद भी आंखे खुली रहती, लेकिन वे आँखे नहीं देख सकती क्योंकि शरीर मृत होने पर वह इस शरीर से निकलकर अन्य शरीर में प्रवेश कर लेती है।

इसको समझने के लिए हम कई बिन्दुओं से स्पष्ट करेंगे।

संसार एक समुद्र है और शरीर नोका है, जहाज की समुद्र रूपी आत्मा को पार करने के लिए मनुष्य को जहाज व नौका का सहारा लेना पड़ता है।

आत्मा एक समुद्र है उसको पार करने के लिए शरीर को माध्यम बनाकर पार करना पड़ता है। एक लकवा से पीड़ित व्यक्ति अपना शरीर नहीं हिला सकता इसको कर्ण वीर्य शक्ति कहते है क्योंकि उसका शरीर शीतल हो चुका है लेकिन आत्मा शीतल नहीं होती वह हमेशा चेतन रहती है।

मनुष्य जब संसार में आया था वह खाली हाथ आया था व खाली हाथ जाएगा। चाहे मनुष्य कितना भी बड़ा हो, साम्राज्यवादी हो, तानाशाह हो, अरबपति हो, सम्राट सिकन्दर महान हो जब उसकी मृत्यु होती है वह खाली हाथ ही जाएगा। संसार में सबसे बड़ा तानाशाह हुआ था जिसने अपनी शक्ति के माध्यम से लाखों लोगों की हत्या कर दी युद्ध समाप्त होने के बाद उसको विचार आया कि इतना खून खराबा किया, उसको क्या मिला ? निष्कर्ष कुछ नहीं मिला। यह कहना चाहिए कि उसको पछतावा और उसने अपनी आत्मकथा में लिखा कि उसे आत्मबोध हुआ कि मनुष्य खाली हाथ आया और खाली हाथ ही जाएगा। इसलिए लिखा कि उसकी मृत्यु के बाद उसके दोनों हाथ खाली रखे और यह भी शिक्षा दी उसने जो कुछ किया, गलत किया ओर कोई व्यक्ति ऐसा नहीं दोहराएगा। लेकिन वर्तमान में जो स्थिति हो रही है, ऐसा प्रतीत होता है कि किसी न किसी की कोई शिक्षा नहीं ली।

प्रकृति के नियम है उसका भी पालन करते हुए मनुष्य को काम करना चाहिए। इसको हम इस प्रकार समझ सकते है

आत्मा है और उस पर विजय प्राप्त करने के लिए जहाज और नौकर के माध्यम से शरीर कार्य करता है अर्थात् नौकर रूपी शरीर कैसे कार्य करे जिससे पुण्य व पाप हो। यदि मनुष्य दुष्कर्म करेगा तो पाप का संचय होगा और पाप जो मनुष्य ने पूर्व भव में किये है वह जिस भव में उदय होगें जिसकी गीता में प्रारब्ध कहा है, उसको भुगतना ही होगा, रोका नही जा सकता और सुकृत कार्य करने से पुण्य का संचय होगा। और मनुष्य जिस दिन यह समझ लेगा कि वह अनन्त ज्ञान वाला, अनन्त दर्शन वाला व ज्ञानी है। उस दिन सिद्ध हो जाएगा जिसके लिए धार्मिक क्रिया व प्रायश्चित करने की अवस्था।

जैन धर्म में प्रतिक्रमण करके प्रत्येक प्राणी मात्र से क्षमा माँगते हैं जिसको स्वीकार करना चाहिए। कहा जाता है कि क्षमा मांगना व देना दोनों ही बहुत बड़े है। प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी प्रकार त्रुटि हुई हो अपराध हुआ तो मन, वचन काया से क्षमा मांगते है।

मनुष्य योनि मिलना बहुत दुर्लभ है। जैन धर्म के अनुसार सुकृत कार्य से बार–बार मनुष्य जीवन मिल सकता है लेकिन वैदिक धर्म के अनुसार जो 8 वें भव में सुकृत में कार्य करता है तो 9 वें भव मनुष्य योनि प्राप्त होती है लेकिन इसमें कमी आई या कड़ी टूट गई हो 99 भव के बाद 99 भव में मनुष्य जीव को मिलेगा और इसके 999 वर्ष बाद यह अवसर आएगा। तात्पर्य यह है कि मनुष्य जीव ऐसा है जो मोक्ष की ओर जा सकता है क्योंकि उसका विकासशील मस्तिष्क है, सोचने की शक्ति है, कार्य करने की क्षमता है।

अतः मनुष्य को हमेशा सुकृत कार्य करना चाहिए जिसमें पुण्य–दान, प्रवृति का होना आवश्यक है।

आत्म विज्ञान को दृष्टि विज्ञान भी कहा जाता है जैसी मनुष्य की दृष्टि होती है वैसे ही सृष्टि होगी जैसी दश होगी वैसे ही दशा है, लिखने का तात्पर्य यह है कि यह सिद्धान्त नकारात्मकता से सकारात्मकता की ओर ले जाता है। यदि मनुष्य की बुरी सोच को सच्ची व सही सोच मिलती है वही वास्तविक सत्य व सम्यक् दर्शन कहलाता है।

सम्यक् दर्शन प्राप्त करने के संस्कार बहुत महत्वपूर्ण होते है। बालक में बचपन से ही सुविचार दिए जाये तो उनका जीवन अच्छा बनेगा लेकिन दुर्भाग्य यह कि बालको में सद्विचार देने के लिये पाठशालाएं संचालित नहीं है और यदि है भी वह स्थायी नहीं है, इसके साथ–साथ संविधान में हिन्दू जिसमें जैन भी सम्मिलित है कि वह अपने–अपने धर्म की पाठशाला, कॉलेज संचालित नहीं कर सकते जबकि अन्य धर्मावलंबियों को छूट दी गई है। इसमें संशोधन की आवश्यकता है। यह विचारणीय बिन्दु है। समाज इस पर विचारार्थ प्रस्तुत है।

आत्म विज्ञान (आत्मा-परमात्मा)

आत्मा–परमात्मा की अवधारणा को समझने के लिए दो प्रकार से समझना होगा इसकी दो क्रिया है– जिसको हम धर्म क्रिया भी कह सकते हैं।

धर्म क्रिया को भी समझने के लिए दो धर्म होते हैं (1) स्व–धर्म (2) पर–धर्म

स्व–धर्म का अर्थ मेरा और पर का अर्थ पराया अर्थात् तुम्हारा

इसको हम इस प्रकार समझते है : (1) चेतन – मेरा (स्व–धर्म) अर्थात् मैं जैन हूँ, कहाँ से आया हूँ व कहां जाता हूँ।

स्व को जानने वाला ही आत्मा को जानना और व्याख्या करना विज्ञान है।

आत्मा – यह स्थिर, स्थायी है, अविनाशी है, केन्द्र बिन्दु पर स्थित है।

पर – यह शरीर है जो अस्थिर है, अस्थाई है, नाश्वान है। जितने ये भौतिक साधन जैसे मकान, गाड़ी, नौकरी रूपये धन आदि सम्मिलित है।

यह दोनों सम्मिलित होते हुए पृथक–पृथक आत्मा केन्द्र बिन्दु है तो शरीर बाह्य है जिसमें बाहरी आवरण (पृद्गल) से ढक रहा हूँ।

आत्मा ही परमात्मा है

जो हमारा शरीर बना है वह पाँच मूलभूत तत्वों (वायु, पृथ्वी, पानी, अग्नि व आकाश) से बनता है वह मरता है तो मूल तत्व में मिल जाते है और आत्मा निकल जाती है। यह आत्मा मनुष्य प्राणी के शरीर में उसके कर्मों के आधार पर बनती है। एक से पचेन्द्रिय तक वहीं आत्मा पुनः स्थापित है केवल चोला बदल जाता है। स्टीफेसन नामक वैज्ञानिक ने इसको डर्ब की संज्ञान दी है। Mass Causes आते हैं, मिलाते हैं। जब प्राणी वापस आत्मा वापस आ जाएगी।

भौतिक विज्ञान में वाई प्रेशन का सिद्धान्त भी प्रतिपादित है। जो कुछ हम बोलते हैं वह आवाज आकाश में संग्रहित हो जाती है वह समय आने पर या खोज होने पर उपलब्ध हो सकेगी इसका वर्णन पूर्व पुस्तक में कहा गया है। महावीर भगवान की वाणी पकड़ने की खोज रही और धीरे–धीरे वाणी प्रकट भी हो रही है, ऐसा विद्धानों का मत है। इस प्रकार हमें विश्वास है, वह समय आएगा जब भगवान वाणी भी प्रति ध्वनित होकर किसी न किसी तरंगों के माध्यम से आएगी। यदि ऐसा शोध भी हो रहा हो तो जानकारी नहीं।

त्याग व भोग

त्याग आनंद की अनुभूति देता है तो भोग से (भौतिक व इन्द्रियों का सुख) अस्थाई रूप से आनंद की अनुभूति मिलती है। यहां यह स्पष्ट करना है कि शरीर मनुष्य की आत्मा (परमात्मा) व प्राकृतिक साधनों का उपयोग में समायोजन रखना चाहिए, अगर इनमें समानता नहीं होगी तो जीवन खराब हो जाएगा।

त्याग का अभिप्राय यह है कि जैन संस्कृति के अनुसार त्याग (तप) को सबसे बड़ा माना है। विद्वानों के अनुसार तीन शब्द प्रायः प्रयोग किए जाते हैं – गंध, हेय, उपादेय गेम, गिननना इसका अभिप्राय यह है कि विश्व में जो वस्तु है उसकी जानकारी करना है और जानकारी के बाद उसकी गुणवत्ता को परखना, परखने के आधार कौन सी वस्तु खराब जिसको छोड़नी है जिसे हेय कहते है और कौन सी वस्तु अच्छी है उसको उपादेय कहते हैं।

उपादेय : ग्रहण करने का होता है, त्याग वह है, त्याग किसे कहते हैं ? वह उदाहरण देकर स्पष्ट करेंगे कि बिल गेट्स ने 13 वर्ष की उम्र में विवाह किया ओर एक I.T. की संस्था बनाई और वह सफलता की ओर बढ़ने लगी। बिल गेट्स ने सोचा कि अपनी आवश्यकता के अनुसार (अपरिग्रह) उन्होंने लगभग 5 प्रतिशत रखते और 95 प्रतिशत राशि लोक कल्याण के लिए अर्पण कर देते और बाद में वह संरक्षक रहते हुए एक ट्रस्ट बनाकर दिया और उस संस्था को प्राप्त होने वाली आय लोक कल्याण के लिए व्यय होती है यह है 'त्याग' और यही उपादेय है। जीवन (शरीर) नश्वर है जो जलकर भस्म हो जाएगा और मनुष्य के द्वारा किए गए सद्कार्य ही आगे की गति निर्धारण करेंगे।

त्याग दो प्रकार के होते है :

1) गृह छोड़ना अर्थात् साधु बन जाता है। इसका उद्देश्य है वह स्वयं का कल्याण व अन्य को उपदेश प्रदान करना।

2) परमार्थ त्याग – इस लोक कल्याण के कार्य करना।

इसको हम विस्तार से निम्न प्रकार स्पष्ट करते है। दो शब्द

(1) अज्ञ (2) प्रज्ञ

अज्ञ – अज्ञान (2) प्रज्ञ – ज्ञान

अज्ञान – मैं शरीर हूँ

मन काया से शुद्ध हूँ

मुक्त होना (आत्मा केन्द्र)

प्रज्ञा का उपयोग करके अर्थात् मनुष्य को सम्यक दर्शन व धार्मिक क्रिया करते हुए सच्चा ज्ञान प्राप्त कर मनुष्य अपनी काया को कंचन काया बना सकता है।

प्रज्ञा पुरूष पुरूषार्थ से प्राप्त होता है ज्यों–ज्यों हमारा पुरूषार्थ (धर्म क्रिया) बढ़ेगा तब हमारा सम्यक ज्ञान बढ़ेगा और अज्ञान समाप्त होगा और वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति होगी।

आत्म विश्लेषण

आत्मा की दृष्टि से मनुष्य का शरीर पांच तत्वों से बना हुआ है। ये पांच तत्व निम्न प्रकार से है। इन

सभी तत्वों का अर्थ, व्याख्या एक उदाहरण के साथ की जा रही है जिससे उसको समझने में सरलता होगी।

1) आत्मा : आत्मा वह है जो एक कण का समूह से पिण्ड है। यह केन्द्र में स्थित है, यह स्थिर, अविनाशी, अदृश्यी है, वह देखती है सभी कार्य करती है। यह चेतन होती है, जब अचेतन हो जाएगी तब यह मनुष्य की शरीर से निकल जाएगी और मनुष्य द्वारा किए गए कर्मों के आधार पर अन्य जीव में प्रवेश कर जाएगी और आत्मा व जड़कारी शरीर एक दूसरे मिले हुए होते हैं, शरीर से बाहर निकल जाएगी तो मनुष्य मृत घोषित हो जाएगा और शेष अवयव जिसको पुद्गल कहते हैं, अपने–अपने समूह जैसे पृथ्वी–पृथ्वी में, जल–जल में, वायु–वायु में, अग्नि–अग्नि में व आकाश–आकाश में मिल जाएगा क्योंकि मनुष्य इन्ही पांच तत्वों से बना होता है और आत्मा अलग हो जाएगी। यहां हम आत्मा को समुद्र की संज्ञा देते हैं।

2) पाप : पाप का अभिप्राय यह है कि मनुष्य की जड़ रूपी शरीर (अचेतन) द्वारा अशुद्ध कार्य जो किए है वे जो उदय आने पर उसका भुगतान करना पड़ता है। यह एक दरवाजा है या समुद्र है सभी आत्मा में संग्रहित पानी का एक मार्ग है।

3) पुण्य : गत भवों से सुकृत कार्य किये गये उनका संचार होता है उससे मनुष्य में दया, करूणा, समता, परोपकारी का कार्य करना है। यह भी एक मार्ग (दरवाजा) है।

4) आश्रव : आश्रव उसे कहते हैं जिस मार्ग से मनुष्य द्वारा पूर्व भव में पाप–पुण्य कार्य किये जाते हैं वह संग्रहित हो जाते है।

नव तत्व की शरीर संरचना

मनुष्य की रचना के तत्वों का वर्णन करने के पूर्व मनुष्य को स्वयं को देखना चाहिए कि मैं कौन हूँ। इसको समझने के लिए भी हमको दो तत्वों को समझना होगा।

(1) स्व – धर्म (2) पर – धर्म

स्व का तात्पर्य – मैं और पर का तात्पर्य – पराया। मैं कहां से आया व मेरा क्या स्वरूप है इससे स्पष्ट होता है मैं मेरे पूर्व जन्म में किए गए कर्म के अनुसार मेरा उदयभाव होने से (गीता में प्रारबंध) मनुष्य की योनी में जन्म हुआ वह भी जैन धर्म (कुल) में ..... मैं चेतन अवस्था में रहता हूँ। चेतन का तात्पर्य है – आत्मा इसके विपरीत पराया – दूसरों पर आधारित रहता है जैसे शरीर आंख नहीं देखती, देखने वाला कोई ओर है यह है "आत्मा"। हमारा शरीर आत्मा के अधीन रहकर कार्य करना है। यह शरीर भौतिक साधना से लिप्त रहता है और इसमें कर्ता भाव आ जाता है, अतः अहंकार का भाव होता है, अर्थात् अचेतन कहलाता है। इसके आधार पर स्वभाव व विभाव को समझा जाता है। अधिक विस्तार नहीं कर यहां चेतन व अचेतन का आगे वर्णन करेंगे। दूसरे शब्द "धर्म" है धर्म का अर्थ है गुण या क्रिया है। गुणक्रिया के आधार पर मनुष्य के कर्म बनते हैं या बंध हो जाते हैं।

धर्म को जानने के लिए धर्म निम्न प्रकार से प्रचलित है (1) जैन धर्म (2) वैदिक धर्म (3) सिख धर्म (4) ईसाई धर्म (5) इस्लाम धर्म (6) पारसी धर्म (7) बौद्ध धर्म (8) अन्य जो भी। इन सब धर्मो में एक तत्व ऐसा है जो सभी में समावेश है कि मैत्री–परोपकार–यह बात अलग है कि वर्तमान में मनुष्य की महत्वाकांक्षा ने अपने कर्मों के परिवर्तन की परिभाषा में परिवर्तन कर दिया है।

जिसका फल का भी भुगतान हो रहा है जिसको समझते हुए भी नहीं समझना चाहते :

(1) पृथ्वी (2) वायु (3) अग्नि (4) जल (5) आकाश

उक्त धर्मों में जैन धर्म एक ऐसा धर्म है जिसमें हिंसा को मूल रूप से नकारा कहा है और अहिंसा को सूक्ष्म से सूक्ष्म तरीके से परिभाषित किया गया है। जैन साधु इसका पालन भी करते हैं। जैन साधु की विशेषता यह है कि उसका कार्य कल्याणकारी होता है, उनके कोई घर नहीं होता, वे एक स्थान से दूसरे स्थान तक चलते रहते हैं, एक स्थान पर रहने से उनमें मोह, मान, राग, द्वेष व क्रोध की भावना जागृत हो सकती है, कहा जाता है कि बहता पानी व चलता जोगी हमेशा स्वच्छ होते है।

उनके कोई रसोई नहीं बनती है, वे समाज से भिक्षा प्राप्त करते है। इनका कोई रिश्ता नहीं होता। साधु–बनने के पहले उनके माता–पिता, भाई आदि होते है उनको भी सांसारिक माता–पिता धर्म कहते हैं। उनका सम्पूर्ण विश्व से ही रिश्ता होता है, उनसे ही कल्याणकारी, परोपकारी कार्य करते हैं, करवाते हैं। इन सब का वर्णन के बाद निम्न तत्वों के द्वारा मनुष्य के शरीर की संरचना होती है।

1) जीव (2) अजीव (3) पाप (4) पुण्य (5) आश्रव

(6) संवर (7) निर्झरा (8) बन्ध (9) मोक्ष

1) जीव : यह चेतन तत्व होता है जो चेतन मय कणों के पिण्ड से बनता है। दार्शनिक भाष्य में इसको हम आत्मा कहते हैं। विज्ञान इसको नहीं मानता लेकिन वे Consenious को मानता है, आत्मा नहीं कहती लेकिन उसका Consciousness ही आत्मा है। यह अविनाशी होती है, यह देखती है, सुनती है चलती है, फिरती है। यह स्थिर होती है। इसके साथ साथ यह केन्द्र में स्थित होती है तथा अदृश्य रहती है। मनुष्य इसको देख नहीं सकता लेकिन अनुभूति कर सकते हैं। इसके कई उदाहरण हमने पूर्व में प्रस्तुत किए है। यह अनुभूति एकेन्द्रिय जीव से पंचेन्द्रिय जीव तक होती है, अचर यह है एक दिन जीव के वाणी नहीं होने से बोध और पचेन्द्रिय जीव के पांच इन्द्रियां होती है, वह प्रगट कर सकता है।

2) अजीव : वह जीव है जो नाश्वान है, अस्थायी है। मनुष्य का शरीर अजीव है, जड़ पदार्थ है इसका यह आत्मा के साथ जुड़ा रहता है इसके माध्यम से ही आत्मा सारा कार्य करती है। मनुष्य का आयुष मोक्ष समाप्त हो जाने पर आत्मा से छुटकारा हो जाता है और शरीर जला दिया जाता है तब शुद्ध आत्मा निकलकर अपने किए गए कर्मों के कारण उसके उदय स्थल में प्रवेश करती है। नवीन रूप धारण कर अपने नूतन कर्म जो किए है, उसी आधार पर कार्य करती है।

3) पुण्य : जड़ रूपी शरीर शुभ कार्य करता है वे पुण्य कहलाता है और पुण्य का पलड़ा भारी होने से जीव परोपकारी, सुख–सुविधा से भोग करता है। (राग, द्वेष, क्रोध, मान)

4) पाप : जड़ रूपी शरीर जो अशुद्ध कार्य करता हैं, वे सभी पाप कहलाते हैं, उसी आधार पर आगामी जीव के रूप में भुगतान पड़ता है।

5) आश्रव : इसके पांच (राग, द्वेष, क्रोध, मान) माया होते है, मनुष्य के कर्मों के आधार पर ये कर्म पुण्य पाप, शुद्ध, अशुद्ध कार्य के आधार पर होते है। ये इसको हम इस उदाहण के रूप में भली प्रकार समझ सकेंगे।

एक स्वच्छ पानी का कुण्ड है जो शुद्ध आत्मा का रूप है। इसमें पानी आने के 5 द्वार (आश्रय) है जो कर्म के आधार प रउसमें पानी रूपी कर्म से करता है।

6) संवर : आश्रव द्वारा जो शुद्ध – अशुद्ध, पाप–पुण्य होते है उसको बंद करने को कहा जाता है। प्राप्त होते है जिसका संचय होता है, वह संवर और संचय हो जाते है।

7) बंध : आश्रव के द्वार को बंद कर देने से व्रत कर्म कुण्ड रूपी आत्मा में आयेंगे तो उन द्वार को बंद कर देते है तथा जो कर्म (शुद्ध व अशुद्ध) भीतर आयु के वे आत्मा के साथ जुड़ जाते है अर्थात् चिपक जाते है जो छूटते ही नहीं है।

8) निर्झरा : जो कर्म आत्मा के साथ जुड़ जाते हे उनको अलग करने के लिए जैसे प्रतिक्रमण, प्रेक्षाध्यान, क्रिया द्वारा अलग करने पड़ते है तथा प्रतिक्रमण करते समय सभी जीवो से मन, वचन, काया द्वारा किए जो अशुद्ध कार्यो के लिए क्षमा मान कर प्रायश्चित करने की क्रिया होती है।

9) मोक्ष : आत्मा के साथ जुड़े कर्म जब पूर्ण रूप से अलग हो जाते है और आत्मा पृथक हो जाती है तो उसे मुक्ति अर्थात् मोक्ष कहते हैं।

इसको इस प्रकार समझते है कि जब मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, शरीर जल जाता है और आत्मा के रूप बनते है :

1) यदि सभी कषाय, सभी अष्ट कर्म की निर्झरा हो जाती है तब वह पुनः जीवन मरण मे नहीं आता है और तीर्थकर बन जाता है।

2) दूसरा रूप यह है कि यदि उसका कर्म के अनुसार पुनः जन्म लेता है तब आत्मा पुनः मनुष्य के कर्म के अनुसार नया जन्म लेती है और मनुष्य को उस नूतन कर्मों के आधार पर नये जीवन में उसको भुगतना पड़ता है। अच्छे कर्म होने पर यह संयम, समता, परोपकारी बनता है ओर अशुद्ध कर्म होने पर एकेन्द्रिय योनि से पंचेन्द्रि योनि में जन्म लेकर उसको भुगतना होगा।

आठ कर्म : ज्ञानावर्णिय, दर्शानावर्णिय, मोहिनवर्णिय, वेदना वर्णिय, आयुष्य वर्णिय, गौत्र वर्णिय, नासवर्णिय, अन्तराय कर्म।

यह स्पष्ट होना होगा कि आत्मा व शरीर एक दूसरे से जुड़े होते हुए अलग इकाई होती है, लेकिन एक दूसरे से जुड़े होने से निश्रित हो जाती है। जैसे सोना जब खान से निकाला जाता है तो उसके साथ मिट्टी व मिट्टी कण जुड़े होते हैं, उसको साफ कर शुद्ध सोना अलग किया जाता है उसी प्रकार से आत्मा पर लगे अशुद्ध कर्म को शुद्ध बनाया जाता है वही शुद्ध आत्मा कहलाती है।

उक्त नव तत्वों को समझने के बाद मनुष्य को किस प्रकार से कार्य करना चाहिए। वे उसकी भावना के आधार पर होती है और 12 भावना का वर्णन पूर्व में वर्णन किया है। ध्यान की दृष्टि से भी इसको देख ले ध्यान भी चार प्रकार के होते हैं।

1) आर्द ध्यान : इसमें मनुष्य बार–बार एक ही चिन्तन करता है वह कब धनाढय बनेगा, कैसे आनन्द प्राप्त करे या किसी की मृत्यु होने पर भी उस पर चिन्तन करता रहता है।

2) रोद्र ध्यान : दूसरे मनुष्य अहंकार, ईर्ष्या, हिंसा, क्रोध का ही बार बार ध्यान आदि करता है।

3) धर्म ध्यान : मनुष्य प्रतिक्षण धर्म क्रिया में ही ध्यानरत है, धार्मिक क्रिया, प्रतिक्रमण करना सम्यक ज्ञान पर, सम्यक दर्शन पर विचारमान होकर सत्यता की ओर अग्रसर रहता है।

4) शुक्ल ध्यान : इसमें मनुष्य / साधु एक ही ध्यान में भ्रमण करता है कि वह ज्ञाता है, दृष्टा है, अपने ही धर्म क्रिया में मग्न रहता है। प्रतिक्रमण करता है, प्रायश्चित करता है। क्षमा मांगने का भाव करता है। ऐसी क्रिया करते हुए वह सिद्ध बुद्ध हो जाता है और अंत में सिद्धशिला पर विराजमान हो जाता है। उसका कल्याण हो जाता है, उसे पुनः 84 लाख योनियों में भटकना नहीं पड़ता है। आत्म विज्ञान को सभी बिन्दुओं जैसे स्वभाव–विभाव, अहिंसा परमोधर्म, कर्म बंधन, प्रता, विवेक, परमार्थ, विनय, अविनय, विनय कायरता है, स्वधर्म, पर धर्म आदि पर विवेचन करे तो यह स्पष्ट होगा।

1) अनगार : ये पक्के नियमों का पालन करने वाले है। पांच व्रतों का कठोर रूप से पालन करने वाले होते हैं।

2) आंगार : इस प्रकार के साधु–महाव्रतधारी होते हैं, थोड़े शीथिल होते हैं। कमजोर होने से क्रिया में शिथिल होते हैं। इसमें गृहस्थ भी सम्मिलित होते हैं।

इन नव ही तत्वों का पालन साधु भी और श्रावक दोनों ही करते हैं, लेकिन श्रावक के लिए अणुव्रत बतलाए गए है वे व्रत निम्न प्रकार है :

1) अहिंसा (2) सत्य (3) अचोर्य (4) ब्रह्मचर्य (5) अपरिग्रह

यह सभी उसकी भावना पर आधारित होते हैं

ये तप के समान है, साधु–श्रावक का कर्तव्य है कि मन एवं विचारों पर नियन्त्रण करने से अच्छा आचरण होता है। इससे आत्मा की अशुद्धता से उपर उठती है।

1) अनित्य भावना : हमारा स्थाई है।

2) संसार भावना जन्म मरण चलता रहता है, आत्मा मृत्यु होने पर एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रविष्ठ हो जाती है।

3) आमरण : आत्मा के लिए सम्यक के अतिरिक्त सुविधा नहीं है।

4) एकत्व भावना : देह आत्मा के साथ नहीं है।

5) अत्यत्व भावना : वास्तव में आत्मा व शरीर पृथक–पृथक है।

6) अशुचि भावना : शरीर का अभिमान नहीं करना चाहिए क्योंकि वह नश्वर है।

7) आश्रव : आत्मा पर बन्धन रहता है।

8) संवर : अंत यह चिंतन आवश्यक है कि आत्मा को बन्धन से केसे बचाए।

9) निर्झरा भावना : बन्धे हुए कर्मों भी कैसे निर्झरा हो।

10) लोक भावना : इस पर 6 द्रव्यों का विचार है (1) आकाश (2) जीव (3) अजीव (4) समय (5) गति का माध्यम (6) स्थिरता का माध्यम

11)बोधि दुर्लभ भावना : सम्यक ज्ञान, दर्शन एवं सम्यक् चारित्र को प्राप्त करने के मार्ग पर कई कठिनाईयां आती है, यह कठिन मार्ग है।

12) धर्म भावना : 24 तीर्थंकर द्वारा प्रतिष्ठित पांच महाव्रतों अहिंसा, संयम, तप, अपरिग्रह तथा आचार्यो का चिंतन आवश्यक।

क्या ईश्वर है ?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए एक प्रश्न के साथ देना समझना उचित है।

एक राजा ने अपने मंत्री से प्रश्न किया कि मंत्री इन प्रश्नों का उत्तर दे और न देने पर में नगर में सभी देवालय में स्थापित मंदिर में बिराजित प्रतिमाओं का तोड़ दी जाएगी और प्रश्न का उत्तर कल ही राज दरबार में प्रस्तुत करना है

प्रश्न – ईश्वर है !

इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए मंत्री सोच में पड़ रहा था और चिंतित हो रहा था कि क्या उत्तर देंवे। गृह में मंत्री को उदास देखकर उसकी पुत्री ने पिताजी को चिंतित होने का कारण पूछा तो मंत्री ने पुत्री को राजा की बात को बतायी तो पुत्री ने कहा कि बस इतने से प्रश्न से आप चिन्तित है। आप मुझे साथ लेते जाना और राजा को कहना कि उनके प्रश्नों का उत्तर उसकी पुत्री देगी। राजा की आज्ञा प्राप्त कर पुत्री ने

राजा को कहा कि क्या उसे घोड़ा मिलेगा, तो एक कटोरे में दूध मंगवाया और उसने पूछा कि

पहले प्रश्न का उत्तर यह है कि ईश्वर है

क्या इस कटोरे में दूध के अतिरिक्त कुछ और भी है, राजा ने कहा – नहीं, पुत्री ने कहा कि मुझे तो इसमें मट्ठा दिखाई दे रहा है। इसी दूध से मट्ठा, दही–घी मिलता है इसी को ईश्वर ने बनाया है।

दूसरा प्रश्न है ईश्वर कहां है ? पुत्री ने कहा कि मुझे एक मोमबत्ती चाहिए। मोमबत्ती जलाकर कहा कि प्रकाश किधर दिख रहा है तो प्रकाश चारों दिशाओ में ऊपर की ओर नीचे सभी ओर दिख रहा है तो यही उत्तर ईश्वर सभी जगह कण–कण में रहता है। यह आपके प्रश्न का प्रमाण होगा।

तीसरा प्रश्न – ईश्वर अभी क्या कर रहा है तो पुत्री ने कहा कि इस प्रश्न का उत्तर लेने के लिए कुछ समय के लिए आप (राजा) मेरे स्थान पर और आपके स्थान (सिंहासन) में बैठ सकती हूँ। तब राजा ने अपनी जगह छोड़कर पुत्री के स्थान पर और पुत्री सिंहासन पर बैठी है तो तब पुत्री ने कहा कि ईश्वर सभी जगह यही कर रहा है कि मैं (पुत्री) सिंहासन पर और आप (राजा) नीचे खड़े है, यही कह रहा है और कहा कि अब भी मंदिरों से मूर्तिया हटवाने की सोच रहे है तब राजा बोले कि मूर्तियां ईश्वर के प्रतीक है।

विधान चिन्तन से प्राप्त होता है।

अनेकान्तवाद – विश्मय – सूर्य – तारे – चन्द्र की रचना करनी।

ईश्वर सभी जगह पाया जाता है। मूर्तियाँ उनकी प्रतीक है यह सर्व शक्तिमान है, सर्वज्ञ है कोई पत्थरों में, कोई शक्ति में, कोई भक्ति में देखता हे वह सभी ओर सबको देखता है, यही एक ही कई स्वरूप है जो परमात्मा है।

कर्म बन्धन

कर्म बन्धन : जैन धर्म व वैदिक धर्म (गीता) में कर्म को विशेष महत्व दिया है। इसको सभी धर्मों ने स्वीकार किया। जो आत्मा में विश्वास करते हैं। इनको अलग–अलग नाम से भी पुकारा जाता है जैसे पाप, पुण्य, कर्मरज, अद्वेष आदि।

आत्मा के साथ यह कर्म रज ऐसी जम जाती है यह एक ऐसा पोदगलिक तत्व होता था जो उठने का नाम ही नहीं लेता। ये तत्व ही कर्म बन्ध कहलाता है तब तक नहीं हटता है जब तक इसके ठोस उपाय है, जैन ज्ञानी कहते है –

अष्ठ कर्म होते है :

(1) ज्ञान वरणीय (2) दर्शन वरणीय (3) वेदनीय (4) मोहनिय

(5) आयुष्य (6) नाम (7) गौत्र (8) अन्तराय

आयुष वर्णीय होते हैं ये कर्म आत्मा पर पर्दे के रूप में पड़े रहते हैं। ये आत्मा का बोध नहीं करने देता है। भगवान बुद्ध को बोध हुआ तब आत्मा स्वतंत्र हो गई।

महावीर भगवान को जब केवल ज्ञान प्राप्त हुआ तब आत्मा मोक्ष को गई और पुद्गल अपने अपने स्थान पर चले गए (पृथ्वी, वायु, अग्नि, आकाश, नभ) आत्मा की शक्ति अधिक होती हे तो मनुष्य को वैराग्य की भावना जागृत होती है, धर्म क्रिया की ओर बढ़ता है, सद्कार्य, परोपकार करने की इच्छा शक्ति होती है और शरीर की शक्ति अधिक होती है तो सांसारिक भोग विलास, भौतिक साधनों की ओर बढ़ता है।

कर्म के कारण – ..... अशुद्ध कार्य, शुद्ध कार्य, पाप–पुण्य

कुछ धाती कर्म होते है जो आत्मा के साथ जुड़े रहते है और अधाती कर्म होते है जो शरीर के साथ जुड़े होते है।

बंधन का कारण है – मैं से अहंकार भाव – क्रोध, मोह, मान, एक अकेला

मैं – मेरा से अहंकार की भावना है कर्म भाव है मैं मेरा नहीं होता है ये सब संयोग होता है।

कई पुद्गल मिलकर कार्य करते है।

कर्मों का बंधन नहीं करना है, कर्म का भाव नहीं करता। गीता के अनुसार निरन्तर कार्य करना चाहिए फल की इच्छा नहीं करनी चाहिए। क्योंकि फल की इच्छा रखी तो कर्म बंध की परिभाषा में आ जाएगा मन निरन्तर कार्य करता रहता। और हर समय में कार्य करता रहता है। निष्काय कार्य करने वाला मनुष्य सुखी रहता है क्योंकि परिणाम उसके हाथ में नहीं होता कई कर्म के अधीन है, करते रहना चाहिए। पुरूषार्थ करना चाहिए।

मन के अनुसार परिणाम नहीं मिला तो हमें दुख होता है।

मनुष्य के पास बुद्धि है, सोचने की क्षमता है, शुद्ध विचार होने पर उसमें करूणा होती है। परोपकार का कार्य करता है। परोपकारी कार्य करने से आत्मा निर्मल होती है, इसके साथ–साथ उसकी प्रतिष्ठा भी बढ़ती है, जीवित रहने में उसका मान होता है और मृत्यु के बाद भी उसके अच्छे कार्यों के लिए याद करते है।

..... दृष्टि से आत्मा तीन प्रकार की होती है (1) बहिरंग आत्मा अथवा बाहरी आत्मा। ऐसा व्यक्ति जो दिखाने के लिए कार्य करता है जिसमें अभिमान, ईर्ष्या की झलक होती है। (2) अर्न्तात्मा कर्म अर्थात् भी वहीं आत्मा के रूप अन्तर्गत शुद्ध कार्य सुकृत कार्य, जिसमें करूणा, परोपकार होता है जिसको निष्काय कह सकते हैं, इसके फलस्वरूप वह क्षमता का भाव आता है, संयम का भाव रहता है, प्रेममय हो जाता है, त्याग मय होता है वहीं परमात्मा बन जाता है।

आत्म विज्ञान का सारांश

पाठकगण को विदित है कि प्राणी के शरीर के केन्द्र में आत्मा स्थित है जो अजर अमर है, शरीर जो भी कार्य करता है वह आत्मा की उपस्थिति में करता है अर्थात् आत्मा क्रियाशील है ओर शरीर नाश्वान है,

अर्थात् शरीर जो भी कार्य करता है वह आत्मा के आदेश द्वारा किया जाता है। आत्मा के तीन भाग होते है :

1) जीवात्मा 2) अन्तर्आत्मा 3) परमात्मा

जीवात्मा अर्थात् मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार प्राणी के भव में जन्म लेता है। मनुष्य योनि भाग्यशाली को मिलती है, इसलिए मनुष्य अपने स्वार्थ का ही सोचता है, मैं, मेरा के अतिरिक्त कोई विचार नहीं आता क्रियाशील रहते हुए मनुष्य को यह विचार आ जाता है कि क्या अच्छा है, क्या बुरा है, यह बोध ही अन्तर्आत्मा कहलाता है, बाद में कोई बुरा कार्य करता है तो उसको अनुभूति होती है कि यह कार्य गलत है, नहीं करना चाहिए, धीरे–धीरे वह आत्मा पर सोचता है, धर्मशील पुरूषार्थ करते हुए कि धर्म क्रिया में लीन हो जाता है और समय आने पर व परमात्मा बन जाता है, अतः आत्मा ही परमात्मा है।

स्वभाव

स्वयं में रहना, स्वभाव में रहना है, सुखी रहते है मैं स्वयं कौन हूँ, शुद्ध आत्मा हूँ, देखने वाला हूँ। स्वभाव के साथ रमण करना है, स्वभाव ज्ञान तो विभाव अज्ञान है, तथा स्वभाव चेतन है जबकि विमान जड़ है, जड़ में शरीर होता है जो संसार में जितने भीकार्य होते शरीर के माध्यम से होते है।

स्वभाव में व्यक्ति हमेशा दूसरों की भलाई, अच्छे के बारे में सोचता है जब विभाव में इसके विपरीत है, सारे कष्ट ही होते है क्योंकि इसमें मनुष्य के पूर्व भव के कर्म के उदय होने से होते हैं, इसको जितना है तो समभाव, संयम से जाना जा सकता है हमारी समता के कारण नये कर्म बन्धन न होंगे।

स्वभाव पांच तरह के होते है : (1) शरीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सज्जनता, दुर्जनता, स्वभाव में स्वस्थ रहता है।

हृदय परिवर्तन

मनुष्य के विचारों को बदलने के लिए दोनों हृदय व मस्तिष्का से आते है। मस्तिष्क दो प्रकार का होता है। दांया पटल व बांया पटल । दांया पटल एक छोटे बालक की तरह होता है, जिससे समझाने पर उसका मस्तिष्क शीघ्र जड़ जमा लेता है। इसलिए ए को प्रारम्भ से ही सुविचार, सु–संस्कार/ मन्दिर जाने से उसकी सोच सही दिशा व सच्चे इन्सान बनने को अग्रसर होती है। वास्तविक ज्ञान की अनुभूति व संस्कार ही बांया पटल इसके विपरीत होता है कि इसमें तर्क होता है यह लौकिक पटल होता है। मस्तिष्क का सम्बन्ध शरीर से संबंधित है जो संसार में रहकर जो भी क्रिया करते हैं वे बांए पटल में आते है और दांया पटल आत्मा से सम्बन्धित है अर्थात् आध्यात्मिक से संबंधित होता है।

अच्छी–बुरी सोच एक साधन है, इसका फलस्वरूप हमारा हृदय परिवर्तन के भाव है, सोचने की शक्ति आती है, कौन करूणा है, सद्भावना है, सहृदयता होती है, सुविचार आते है, नैतिकता आती है।

..... इसमें मनोविज्ञान की दृष्टिकोण बहुत अधिक होती है। इस अवधारणा के लिए मनोवैज्ञानिक साईड इफेक्ट बताया है कि मस्तिष्क की अवस्था को तीन भागों में बांटा गया है :

(1) चेतन (2) अचेतन (3) अवचेतन

हमारा सारा कार्य हमारे सारे कर्म मन वचन काया से होता है। जो हम बोलते है या वाणी निकलती है वह.मन से निकलती है और फिर प्रयोग (प्रवृति) की जाती है। चेतन मन हृदय से जुड़ता है। तीनों का चिंतन भी आवश्यक है इस सारे कार्य में अवचेतन क्रिया होती है क्योंकि शरीर ही ऐसा अंग है जो सारा कार्य करवाता है। यह सारा कार्य अचेतन अवस्था से होता है क्योंकि मनुष्य के पूर्व भवों में होने वाले कर्मों का उदयभाव होने पर हम मनुष्य के अवचेतन मन द्वारा क्रियान्वित होती रहे। उसी का प्रभाव चेतन मन पर होता है और उसके आधार (पाप–पुण्य) से आत्मा पर पड़ता और भविष्य के भव का निर्धारण होता है। जैन शास्त्र के अनुसार, मन–वचन–काया की अवधारणा का एक योग कहा गया है। मन की स्थिति शुद्ध रखनी, वचन (वाणी) बोले हुए क्या, कब बोलना चाहिए और उसी प्रकार काया (शरीर) कार्य करती है।

रंगों के आधार पर शिक्षा लेवे या अनुभव करें तो आप समझेंगे।

1) लाल रंग में रहने पर क्रोध, ईर्ष्या, झगड़ा करने के भव प्राप्त होता है।

2) हरा रंग में हरने के लिए मनुष्य अस्थिर रहेगा, निर्णय करने में असमर्थ भाव होने के भाव आ सके। स्वतंत्र सोच आती है।

3) नीला रंग में रहने से मनुष्य के मन शांत, शुद्ध विचार के भाव आयेंगे।

लेश्या सिद्धान्त के अनुसार पर निम्न प्रकार से रंगों को बताया है :

1) तेजो लेश्या : करूणा क्रिया अर्थात् तीन प्रकार से रंगों से बनती है, सूर्य का नीला, लालिमा इस प्रकार के मनुष्य तेजस्वी, चमकने वाले होते हैं।

2) पदम लेश्या : हल्दी की तरह पीले रंग का होता है, दूसरे आनन्द में रहते है।

3) शुक्ल लेश्या : शुक्ला लेश्या ऐसी है जिससे साधना का बोध होता है जैसे – साधु

4) कृपण : काले रंग जैसा स्वभाव का होता है अशुभ भाव, हिंसा आदि होते है।

5) नीला : छल कपट, चोटी का भाव रहता है।

6) कबूतर : हलका भाव नकारात्मक सोच ईर्ष्या का भाव रहता है।

उक्त प्रकार की प्रवृत्ति वाले मनुष्य को समझाकर अच्छे कार्य को प्रवृत कर हृदय परिवर्तन करते है जिसको हम निम्न उदाहरणों से समझ सकते है।

1) एक व्यक्ति पशु हिंसक है, वे जानवरों को काटकर उसके माँस बेचकर जीवन–यापन करता है, उसको समझा जाए कि इन पशु में आत्मा होती है, वे बोल नही सकते, ऐसा कार्य करना पाप है, अगले भव में वे प्रतिशोधक जीवन निर्वाह के लिए अन्य कई साधन, उनमें से कोई चयन कर अपना निर्वाह कर सकते है, संभव है कि हृदय परिवर्तन होकर जीवों की हत्या से बचा जाए।

2) जेल में रहने वाले अपराधी का अध्ययन किया जाए कि उन्होंने किन परिस्थिति में अपराध किया, क्यों किया, उसके परिवार की पृष्ठभूमि का अध्ययन कर उनको भविष्य में अपराध न करने व सुधारने का संकल्प दिलाया जावे। इस प्रक्रिया में मुझे गौरव का अनुभव होता है कि मेरे सेवाकाल में कई अपराधियों की जांच कर सुधरने का अवसर दिया, सुधरने के लिए तीन–तीन बार अवकाश पर भेजा तथा पारित सजा पूर्ण होने के पूर्व ही समाज में भिजवा कर रोजगार के साधन, भूमि जो अन्यत्र से कब्जा कर लिया पुनः दिलाकर परिवार में, समाज में, पुर्नस्थापित कराया, यहाँ तक भी प्रमाण–पत्र देकर अच्छे पद पर शोभायमान होकर समाज हित के कार्य में संलग्न रहे। ये हृदय परिवर्तन के कारण ही सम्पन्न हुए।

3) वाल्मिकी जैसे ऋषि डाकू थे वे भी सद्गुरू। महापुरूष के उपदेश से अच्छे इन्सान बनकर "रामचरित मानस" व रामायण जैसे ग्रन्थों की रचना करके समाज में नाम रोशन किया।

विनय – विवेक

आत्मा का परिमाण, स्वरूप आदि का वर्णन को पूर्व किया गया है। इसके अलग–अलग पहलू के आधार पर भी समझ सकते है जैसे :

मनुष्य विनयशील, विवेकशील हो या कायर व डरपोक मनुष्य में जो ज्ञानमाला है, आत्मा को समझता है उसमें विनयगुण, निश्चित रूप से होते हैं, विजय के साथ उसमें विवेक भी होता है क्योंकि वह ज्ञाता है, दृष्टा वाला है, उसकी नजर आत्मा पर होती है। इसलिए हमेशा कृत कार्य ही करने का प्रयास है लेकिन संसार में रहते हुए प्राकृतिक नियमों का पालन करते कभी–कभी वे अशुभ कार्य कर बैठता है। वह पाप कर्म में आ जाता है लेकिन वह ज्ञाता है इसलिए उसका कर्म बन्ध नहीं होता और वह कम बोलने वाला होता है, नम्र स्वभाव वाला है, जो भी बोलता उसको विवेकपूर्ण से बोलता है क्योंकि उसको ज्ञात है कि उसको कब, क्या बोलना है। इसको इस उदाहरण से समझा जा सकता है :

श्री आर्य रक्षित सूरि हुए है, उनके तीन शिष्य है (नाम ज्ञात नहीं) तीनों आगम के विद्वान थे पहला शिष्य विनयशील, मधुर, कम बोलने वाला, दूसरा शिष्य–विद्वान होने के साथ साथ उसको गर्व था, तीसरा शिष्य बहुत शांत था तथा प्रवचन की शैली थी, श्रावकगण भी उनकी मीठी वाणी से प्रभावित हो जाते थे, एक दिन आचार्य को अपने उत्तराधिकारी के चयन करने का विचार आया और उन्होंने अपने विचार श्रावकगण के सामने रखे तब समाज ने तीसरे शिष्य के लिए कहा कि वे श्रावक–श्रावकों को प्रभावित करने की क्षमता रखते है, तेज है।

एक दिन आचार्य श्री साधु भगवन्तों, श्रावकों को आमंत्रित किया और उन्हें एक प्रश्न किया कि उसके पास तीन पातरे है – एक में उड़द की दाल भरी, दूसरे में तेल तीसरे में घी भरा हुआ कल्पना दी ओर पहला पाता तीसरे को दूसरा दूसरे और तीसरा पहले शिष्य के पास है और उन पातरे को खाली करने पर क्या होगा ये उत्तर मिला, उड़द का खाली हो जाय, कुछ नही बचेगा । तेल का खाली होने पर तेल की कुछ बूंद पातरे में रह जाएगी और पहले पातरे को आधा से अन्त पातरे में रह जाएगा।

तब आचार्य श्री उन्होंने ज्ञान दिया, उसमें तीसरे के पास कुछ भी नहीं बचा, दूसरे के पास कुछ बचा और पहले के पास बहुत कुछ बचा है अतः वह ही उसका पट्टधर होगा। उसके पास विनय गुण, बिना के साथ विवेक है वह समाज को संचालन करने की क्षमता रखता है।

जैन धर्म की प्राचीनता का पुनः अवलोकन

सभी देश–विदेश के नागरिकों, विशेषकर जैन बंधुओं को मंथन व वाचन करना चाहिए। पूर्व प्रकाशित पुस्तकों का वर्णन मय शिलालेख, लेखों, महापुरूषों के चित्र व उनके द्वारा दिये गये उपदेश का सारांश को पुनः संक्षेप में पुनरावृति की जा रही है।

सर्वप्रथम विशेषकर बंधुओं का आग्रह है कि किसी भी धर्म आचार्य द्वारा लिखे हुए पर विश्वास किया जाए, जो विश्वास नहीं करता है वह उस धर्म का अनुयायी हो ही नहीं सकता। दूसरा अपने धर्मगुरू की आलोचना करना चाहे तो नहीं करें।

क्यों ? इसका विवेचन नहीं करना चाहिए लेकिन एक दूसरे की आलोचना से बचना चाहिए।

प्राचीन जैन धर्म के पूर्व में तीर्थकरों की कई चौबीसी हो चुकी है लेकिन वर्तमान चौबीसी जो श्री आदिनाथ भगवान से श्री महावीर भगवान की चौबीसी तक ही बात करेंगे।

सर्वप्रथम पूर्व (भूत) चौबीसी तीर्थंकर के नाम मिलते हैं। वर्तमान के प्रथम तीर्थकर श्री आदिनाथ ने अपनी पुत्रियों, ब्राह्मी व सुन्दरी को गणित व कला की शिक्षा प्रदान की। श्री आदिनाथ भगवान ने मनुष्यों को असि, मसि, कृषि का ज्ञान सिखाया अर्थात् उस समय लोगों में सभ्यता, संस्कृति कुछ भी नहीं थी। इन कलाओं में साधारण ज्ञान के अतिरिक्त खगोल, ज्योतिष विज्ञान, तकनीकी ज्ञान भी दिया था जिसके प्रमाण पूर्व प्रकाशित विवरण विस्तार से मय प्रमाण के प्रस्तुत किया है।

श्री आदिनाथ भगवान (प्रथम तीर्थंकर) तक जैन धर्म के अतिरिक्त कोई अन्य धर्म नहीं था, श्री सुविधिनाथ भगवान के समय संघ के विच्छेद होने के कारण अन्य मनुष्य जो अच्छे आलोचक भी कह सकते है उन्होंने अपने नाम की लोलुपता के कारण भिन्न–भिन्न विधियो, आडम्बरों, अनुष्ठानों के आधार विकसित हो गए ओर उन्होंने यह भी प्रयास किया कि जैन धर्म समाप्त हो जाए लेकिन धर्म के विकास में कम, अधिक, शिथिल आदि के होने पर भी वर्तमान अक्षुण रूप से जीवित है और वर्तमान में भगवान महावीर के सिद्धान्त प्रासंगिक है।

धीरे–धीरे वैदिक धर्म का वर्चस्व होता रहा, यहां तक वैदिक धर्म जो जैन धर्म से भारी हो गया। इसलिए जैन विद्वान भी जैन धर्म की खोज नहीं करते और वे भी अपनी कलम वेद के आधार पर ही चलाते है, यहां पर किसी का उद्दत नहीं करना चाहता, ऐसे विद्वानों को चिंतन व मनन की आवश्यकता है।

यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि श्री आदिनथ भगवान से लेकर वि.सं. 1000 तक श्रुत ज्ञान था उस समय लोगों के विश्वास और सादा जीवन होने से स्मरण शक्ति उच्चकोटि की थी, अतः वे जो सुनते व कण्ठस्थ हो जाता, धीरे–धीरे ताड़ पत्र पर लिखना प्रारम्भ हुआ, वि.सं. 1100 से 1400 तक जितने भी ग्रन्थ मिलते है वे ताड़पत्र पर ही लिखे गए है जो कई जैन ताड़पत्रीय ग्रन्थ आज भी विद्यमान है। उसका संशोधन का कार्य हो रहा है। महावीर भगवान के समय में 12 वर्षों तक लगातार दुष्काल होने के कारण कई आचार्य भोजन के अभाव, शरीर की ग्रंथियों के शिथिल होने से काल धर्म को सिधारे, शेष जो बचे, उन्होंने विचार किया कि भगवान की वाणी का जिनको कंठस्थ है वे लिखे। आचार्य को अपनी स्मृति में है। वे सभी आचार्यों को एकत्रित कर चार बार बैठक का आयोजन हुआ।

लगभग वि.सं. 11 वीं शताब्दी में आगमों को लिखा गया। जैन समाज में आगम ही जैन दर्शन है।

कागज का प्रादुभाव वि.सं. 1400 में हुआ था उसके पूर्व कागजों पर लिखे गए। किसी भी धर्म में ग्रन्थ की विलय आदरणीय प्रधानमंत्री ने प्रश्न के साथ उत्तर भी दिया कि वेद लिखे ? कोई नहीं जानता तो श्री मोदी जी ने कहा कि वे भी नहीं जानते। कहने, लिखने का तात्पर्य यह है कि जैन धर्म को इतिहास के आधार पर भगवान की वाणी को कब किसने लिखे यह स्पष्ट है। यह कमी है कि हम नहीं जानते।

प्रधानमंत्री ने सत्य बोला, सत्य बोलना महावीर का सिद्धान्त है। श्री आदिनाथ भगवान ने ही सामाजिक अवधारणा का पाठ पढ़ाया।

जैन धर्म व कर्म के सिद्धान्त को मानना है जैसा कर्म करोगे वैसे ही फल भोगने है जैसे कि ऊपर बताया है कि जैन धर्म कर्म के सिद्धान्त को मानता है इस सिद्धान्त में पुण्य, पाप की अवधारणा कही है जैसा करोगे वैसा भरोगे। वर्तमान में कोरोना वायरस नामक बीमारी महामारी बन चुकी है। इसको प्राकृतिक महामारी कहते है और मनुष्य ने न मालूम कितने ही जीवों को मारा होगा।

जिन जीवों को मनुष्य ने पीड़ा दी वे ही जीव अब हमसे बदला ले रहे हैं, चाहे वे कृत्रिम से बने है या प्राकृतिक रूप से। यह प्रतिबद्धता का युद्ध है कर्म को हर मनुष्य का अपने पुण्य–पाप के आधार भुगतना ही पड़ेगा। यह भी सही है कि पुण्य के खाते में से पाप घटाया नहीं जा सकता। पाप की सजा तो हर व्यक्ति को भुगतनी ही होगी। यदि वह पुण्य भी अर्जित करता है तो पुण्य का ग्राफ बढ़ जाएगा। लेकिन पाप का ग्राफ कम नहीं होगा। अतः कर्म तो भुगतना ही है। इसके लिए एक पिक्चर में एक गायन गीतकार ने बनाया है :

कोई लाख करे चतुराई, कर्म का लेख मिटे नहीं भाई

करम का लेख मिटे नहीं भाई, जरा समझे सच्चाई

करम का लेख मिटे न भाई।

अपना सोचा नहीं होता, भाग्य हो तो मिले भाई, अतः भाईयों अब भी समय है कि मूक जानवरों पर हिंसा करना बंद करो, वरना समय आएगा, वह फिर महामारी बनकर आप पर टूटेगा।

अतः जैन धर्म में 9 का अंक शुभ माना है। जैन धर्म का महा प्रभावी नवकार मंत्र है। जिससे मनुष्य अपने जीवन से पार हो जाता है, इसके 9 पद है। इसमें न नाम की प्रधानता है, न जाति की, इसमें कर्म की ही प्रधानता है। जैन भाइयों को कहीं दान भी देते हैं वहाँ पर 9 के अंक देखते हैं।

'दक्षिण भारत में ऐसे कई जैन मंदिर व हिन्दू मंदिर देखे जा सकते हैं जो इनकी बारीकी खुदाई से विद्यमान है व अद्‌भुत कला है। मैंने बहुत से मनुष्य से इनके समूह में प्रवेशकर वार्ता की तो ज्ञात हुआ कि पूर्व प्राचीनकाल में जैन धर्म के ही कई मंदिर थे। जैसे वैदिक धर्म के अनुयायी को देखकर ईर्ष्या करते थे, उस समय शंकराचार्य ने 4 पीठ चारों दिशा में स्थापित कर वैदिक धर्म, जैन धर्म को कमजोर करने के लिए जैन प्रतिमा को हटाकर हिन्दू धर्म की प्रतिमा को बिराजमान कराया व नूतन मंदिर बनाए।

उदाहरण के लिए तिरूपति बालाजी मंदिर है जो जैन धर्म का है जिसमें नेमिनाथ भगवान की प्रतिमा बिराजित है। जो न्यायालय द्वारा भी सिद्ध हो चुका । ये मंदिर भी उस समय न तो सफल..... था न ही कला के साधन थे । तभी ऐसे विशाल व कलात्मक मंदिर बनाये गये, जिसे पूर्व में 'जिन दिग्दर्शन' नामक पुस्तक में प्रकाशित किया गया है और निम्न उदाहरण भी है ।

पृथ्वी से छः गुणा ग्रह खोजा

न्यूयार्क : 17 साल की उम्र के बालक कुकिर ने अंतरिक्ष के क्षेत्र में ऐसा कारनामा कर दिखाया है, जिसे करने में बड़े–बड़े वैज्ञानिक अपनी पूरी जिन्दगी लगा देते हैं।

नासा में अपने इंटर्नशिप के तीसरे दिन हाईटर्न बाल्य कुकिर ने एक ऐसा ग्रह खोज निकाला जिससे वैज्ञानिक अभी तक अनभिज्ञ थे, इस ग्रह का नाम टी.ओ.आई 1338 रखा गया है। खास बात यह है कि इस ग्रह के दो सूर्य है यानि यह बाइनरी स्टारसिस्ट वाला ग्रह है जिसमें से दो सूर्य है। टी.ओ.आई. 1338 भी ग्रह आकार पृथ्वी से 6.9 गुना बड़ा है और यह पृथ्वी से 1300 प्रकाश वर्ष की दूरी पर स्थित है। सम्भवतः ये महाविदेह क्षेत्र हो सकता है

(हिन्दुस्तान टाईम्स, नई दिल्ली 1120)

अभ्यास से तो मनुष्य प्रभावशाली बनता है

मनुष्य को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बार–बार अभ्यास करना पड़ता है। अभ्यास उस सीमा तक करना चाहिए जब तक उस लक्ष्य तक पहुँच न जावे। उदाहरण के तौर पर भारत में वर्ष 2002 में क्रिकेट का मैच हो रहा था। वो व्यक्ति किशोर ब्रेड हाल, ऑस्ट्रेलिया की ओर से खेल रहा था। उसके लिए मैच का पहला अवसर व पहला दिन था और संयोगवश पहली बॉल पर सचिन तेन्दुलकर को क्लीन बोल्ड कर दिया, उसको बहुत प्रसन्नता हुई कि तेन्दुलकर को क्लीन बोल्ड कर दिया। मैच की समाप्ति पर वह तेन्दुलकर के पास बॉल लेकर गया कि मैंने आपको बोल्ड कर दिया। आप ओटोग्राफ देंवे। उसने बॉल पर लिखा यह अवसर तुम्हारा अंतिम होगा। इसके बाद पुनः यह अवसर नहीं आएगा। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कितना अभ्यास किया होगा लेकिन फिर भी वह करीब 30 मैचों में तेन्दुलकर को आउट भी नहीं कर पा सका।

श्री ध्यानचन्द, वाल्डो विलाफो, फिलिप्स का पेन्टर था। वह सड़क पर घूम रहा था। सामने से एक महिला दौड़ती हुई आ रही थी। वह पेन्टर से टकरा गई और उस औरत ने उसे पहचान लिया कि वे दौड़ती हुई सामने गई और एक कागज व पेन लाई व बोली कि वह मेरे एक पेन्टिंग बना देवे। उन्होंने 20 सैकण्ड में एक सुन्दर व कलात्मक पेन्टिंग बना दी और उसने तीन चार बार पूछा कि उसको खरीदेंगे और क्या बम्बई में उन्होंने कहा कि उसका 50 लाख रु. दे सकते है। तो कुछ समय बाद वह उनके निवास का पता पूछते हुए आई और अपना परिचय देकर कहा कि आपने इस विद्या को कैसे सीखी तो औरत ने उस पेन्टिंग को 50 लाख में दे दी। वह मेरी 30 साल की अभ्यास की कला है।

श्री ध्यानचन्द ओलम्पिक खिलाड़ी थे। उनका इतना अभ्यास था कि उसकी बॉल गिरती नहीं थी। इसका अभ्यास रेल की पटरी पर करते थे। एक मैच में आधा समय निकल गया तो कोई गोल नहीं हुआ तो अन्य खिलाड़ी ने कहा कि क्या बात है कि गोल नहीं हो रहा है। तब ध्यानचंद ने कहा कि गेम रोक दो। ओलम्पिक गेम है, कैसे संभव है। उसने कहा कि मैं नहीं जानता गोल–पोल में कुछ गड़बड़ है। रेफरी आया, नापा तो गोल का ग्राउण्ड छोटा था। कितना बड़ा विश्वास यानि अभ्यास।

इसी क्रम में मूर्तिपूजक समाज के सदस्यों से अनुरोध है कि प्रत्येक सदस्य एक घंटे जैन साहित्य स्त्रोत का अध्ययन करे तो समाज अग्रसर हो सकेगा। केवल दर्शन करने से कोई सार नहीं निकलेगा जब तक धर्म के महतव को न समझा जाए।

ज्ञान की पूजा (महत्ता)

वर्तमानकाल में देखा गया है कि ज्ञान की पूजा नहीं होती है लेकिन असातना अवश्य होती है। असातना भी इतनी निम्न स्तर, की जिसका वर्णन करना भी शोभा नहीं देता है। सधर्म यह अवश्य है कि चातुर्मासकाल में गुरू भगवन्तों के प्रवेश के बाद उनकी पूजा होती है, उसका सम्बन्ध केवल धनराशि से होता है। जो धनराशि आती है उसका उपयोग क्या ज्ञान भण्डार या ज्ञान वृद्धि के लिए होता है ? यह कहना कठिन है। इसका वर्णन कर कर्मबंधन नहीं करना चाहता। ऐसी परिस्थिति ज्ञान पंचमी के दिन भी होती है। कई आराधक उपवास, व्रत आदि करते हैं लेनिक ज्ञान के बारे में क्या होता है ? वर्तमान में ज्ञान भण्डार की उपलब्ध पुस्तकों की देखभाल करने वाला नहीं, झाड़ू लगाने वाला नहीं। मैंने देखा है कि प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ, शास्त्र मोड़–मोड़ कर एक कोने में अव्यवस्थित अनावश्यक रूप से रखे है। खेद है कि वे किसी अन्य ज्ञान भण्डारों के लिए भी नहीं देना चाहते।

यहाँ एक प्राचीन भण्डार का वर्णन है। चित्र देखा भी है, प्रवचन में सुना भी है। सौराष्ट्र की माण्डवी के पास कोड़ार ग्राम में स्थित मंदिर के पास तक ज्ञान मन्दिर शिखरबंद बना हुआ है। वहां बतलाया गया है कि वहाँ पर एक आचार्य का चातुर्मास था। विहार में विश्राम था। श्री संग्रामसिंह सोनी नामक श्रावक ने गुरूदेव को कहा कि गुरूदेव आपके मुखारविन्द से भगवती सूत्र का श्रमण करना चाहते हैं तो श्रावक को सम्मान देने के लिए गुरूदेव ने स्वीकृति दी और भगवती सूत्र में क्या है ?

यह जानना चाहिए कि गौतम स्वामी के प्रश्न 36000 प्रश्न व उत्तर का यह सूत्र है हर प्रश्न के बाद भगवान के मुँह से "गोयमा" होता था और इस श्रावक श्री संग्रामसिंह ने प्रभावना के रूप में एक मोहर ज्ञान पर चढ़ाता। इस प्रकार से जो सोना प्राप्त हुआ उसका उपयोग कैसे हुआ, देखिए, सुनिए। इस सोने को पिघलाकर स्याही के साथ में उपयोग कर स्वर्ण अक्षरों में कल्पसूत्र 2 भागों में रखा गया। कितनी प्रतियाँ तैयार की यह तो ज्ञात नहीं लेकिन एक प्रति श्री बड़ौदा के ज्ञान मन्दिर में सुरक्षित है जिसको श्री

संग्रामसिंह सोनी द्वारा लिखवाया गया। कहा जाता है कि इस प्रकार के ज्ञान की आराधना थी और वर्तमान में क्या हो रहा है, सभी जानते है, विचारणीय है।

वर्तमान ज्ञान भण्डार की देखरेख नहीं हो रही है। पुस्तकें अलमारियों में भरी पड़ी है। इसके लिए जैन धर्म के प्रमुख विद्वान आचार्यश्री कलापूर्ण सूरिजी महाराज साहब ने अपनी पुस्तक में उल्लेख किया है। ज्ञान भण्डार में रखी हुई पुस्तकें निरर्थन नहीं उसके लिए कोई न कोई योग्य व्यक्ति अवश्य आकर उसका उपयोग करेंगे। इसलिए ज्ञान भण्डार को व्यवस्थित रूप से रखना आवश्यक है।

वर्तमान में शंखेश्वर तीर्थ में प्रवचन सुत्र तीर्थ का निर्वाण हो चुका है जिसमें उच्च कोटि का ज्ञान भंडार है जिसका चित्र इस प्रकार है। इसमें इतनी पुस्तकें विद्यमान है। इसके अतिरिक्त पाटण, अहमदाबाद में ज्ञान भंडार विद्यमान है जिसमे से श्री परम पूज्य जम्बूविजय जी म.सा. के शिष्य पुण्डरिक विजय जी म.सा. द्वारा जिसमें ज्ञान भंडार का विशेष महत्व हैं।

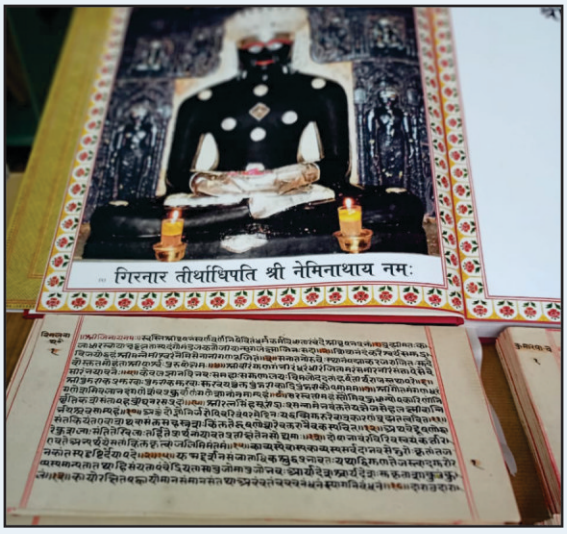

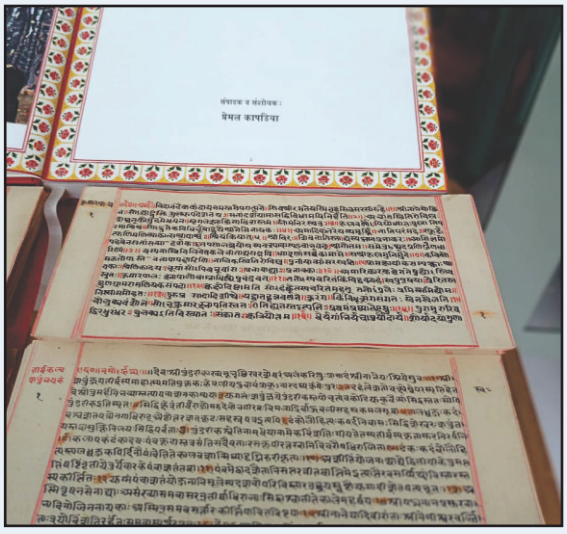

श्री त्रिनेत्र गणेश जी, रणथम्भोर

जहां वे रहते हैं पूरी फैमिली के साथ....

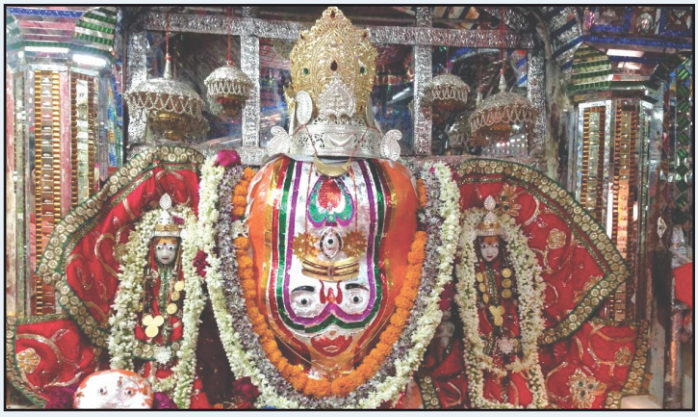

गणेश जी का यह मंदिर कई मामलों में अनूठा है। इस मंदिर को भारतवर्ष का ही नहीं विश्व का पहला गणेश मंदिर माना जाता है। यहां गणेश जी की पहली त्रिनेत्री प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा स्वयंभू प्रकट है। देश में ऐसी केवल चार गणेश प्रतिमाएं ही हैं। हम आपको इस मंदिर के और करीब लिए चलते हैं...

हम बात कर रहे हैं राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले के रणथंभौर में स्थित प्रसिद्ध त्रिनेत्र गणेश जी मंदिर की। इसे रणतभंवर मंदिर भी कहा जाता है। यह मंदिर 1579 फीट ऊंचाई पर अरावली और विंध्याचल की पहाड़ियों में स्थित है। सबसे बड़ी खासियत यह यहां आने वाले पत्र। घर में शुभ काम हो तो प्रथम पूज्य को निमंत्रण भेजा जाता है। इतना ही नहीं परेशानी होने पर उसे दूर करने की अरदास भक्त यहां पत्र भेजकर लगाते है। रोजाना हजारों निमंत्रण पत्र और चिट्ठियां यहां डाक से पहुंचती हैं। कहते है यहां सच्चे मन से मांगी मुराद पूरी होती है।

महाराजा हम्मीरदेव चौहान व दिल्ली शासक अलाउद्दीन खिलजी का युद्ध 1299–1301 ईस्वी के बीच रणथम्भौर में हुआ। इस दौरान नौ महीने से भी ज्यादा समय तक यह किला दुश्मनों ने घेरे रखा। दुर्ग में राशन सामग्री समाप्त होने लगी तब गणेशजी ने हमीरदेव चौहान को स्वप्न में दर्शन दिए और उस स्थान पर पूजा करने के लिए कहा जहां आज यह गणेशजी की प्रतिमा है। हमीरदेव वहां पहुंचे तो उन्हे वहां स्वयंभू प्रकट गणेशजी की प्रतिमा मिली। राजा ने त्रिनेत्र गणेश जी का मंदिर बनवा दिया। हम्मीर देव ने फिर यहां मंदिर का निर्माण कराया। राजा के आदेश पर यह मंदिर श्री टोडरमल जी बोल्या ने बनाया ।

मंदिर की प्रतिष्ठा होने के बाद हमला करने आई सेना स्वतः ही तितर–बितर हो गई । तब से इस मंदिर की महिमा अलग ही है। यहां सभी जनों की अगाध श्रद्धा है।

त्रिनेत्र गणेश जी का उल्लेख रामायणकाल और द्वापर युग में भी मिलता है। कहा जाता हैं कि भगवान राम ने लंका कूच से पहले गणेशजी के इसी रूप का अभिषेक किया था। एक और मान्यता के अनुसार द्वापर युग में भगवान कृष्ण का विवाह रूकमणी से हुआ था। इस विवाह में वे गणेशजी को बुलाना भूल गए। गणेशजी के वाहन मूषकों ने कृष्ण के रथ के आगे–पीछे सब जगह खोद दिया। कृष्ण को अपनी गलती का अहसास हुआ और उन्होंने गणेशजी को मनाया। तब गणेशजी हर मंगल कार्य करने से पहले पूजते हैं।

कुष्ण ने जहां गणेशजी को मनाया वह स्थान रणथंभौर था। यही कारण है कि रणथम्भौर गणेश को भारत का प्रथम गणेश कहते हैं। मान्यता है कि विक्रमादित्य भी हर बुधवार को यहां पूजा करने आते थे।

इस मंदिर में भगवान गणेश त्रिनेत्र रूप में विराजमान है जिसमें तीसरा नेत्र, ज्ञान का प्रतीक माना जाता है। पूरी दुनिया में यह एक ही मंदिर है जहां गणेश जी अपने पूर्ण परिवार, दो पत्नी– रिद्दि और सिद्दि एवं दो पुत्र– शुभ और लाभ, के साथ विराजमान है। देश में चार स्वयंभू गणेश मंदिर माने जाते है, जिनमें रणथम्भौर स्थित त्रिनेत्र गणेश जी प्रथम है। इस मंदिर के अलावा सिद्दपुर गणेश मंदिर गुजरात, अवंतिका गणेश मंदिर उज्जैन एवं सिद्दपुर सिहोर मंदिर मध्यप्रदेश में स्थित है। यहां भाद्रपद शुक्ल की चतुर्थी को मेला आयोजित होता है जिसमें लाखों भक्त गणेशजी के दरबार में अपनी हाजिरी लगाते है। इस दौरान यहां पूरा इलाका गजानन के जयकारों से गूंज उठता है। भगवान त्रिनेत्र गणेश की परिक्रमा 7 किलोमीटर के लगभग है। जयपुर से त्रिनेत्र गणेश मंदिर की दूरी 142 किलोमीटर के लगभग है।

रणथंभौर गणेशजी का मंदिर प्रसिद्ध रणथंभौर टाइगर रिजर्व एरिया में स्थित है। यहां की प्राकृतिक सुंदरता देखते ही बनती है। बारिश के दौरान यहां कई जगह झरने फूट पड़ते है और पूरा इलाका रमणीय हो जाता है। यह मंदिर किले में स्थित है और यह किला संरक्षित धरोहर है। जब यहां गणेशजी का मेला आयोजित होता है तो आस्था देखते ही बनती है। आसपास के जिलों से कई किलोमीटर की पैदल यात्रा कर भक्त मंदिर के दर्शन के लिए आते है।

संदर्भ : बोल्या परिवार वंशावली

विज्ञान और जैन दर्शन पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन

जैन अवधारणाओं एवं मूल सिद्धान्तों से वैज्ञानिक अनुसंधान एवं प्रयोगों का संचालन महत्वपूर्ण रूप ले सकता है। अमरीका के फ्लोरीडा इन्टरनेशनल युनिवर्सिटी के स्टीवन जे. ग्रीन स्कूल ऑफ इन्टरनेशनल एण्ड पब्लिक अफेयर्स और जैन एजुकेशन एण्ड सिरर्च फाउण्डेशन की ओर से ऑनलाईन आयोजित सम्मेलन में दुनियाभर से 2 हजार से अधिक प्रतिनिधियों ने अपनी भागीदारी रही।

जैन दर्शन में आत्मा और चेतना विषय पर पहले सत्र में आचार्य विजय नंदीघोषसूरी महाराज ने जीवित प्राणियों में चेतना के अस्तित्व का समर्थन करने के लिये वैज्ञानिक तथ्यों को सार्थक किया। प्रो. कान्ति मरड़िया ने जैन चेतना पर अपने दो मॉडल साजा किये। प्रो. सी. देवकुमार ने मतिज्ञान की जैन अवधारणा को वैज्ञानिक रूप से समझाते हुए इस तथ्य को स्वीकार करने के लिय अपने विचार दिये कि सांसरिक आत्माएं कम्र से बंधी है और सभी को इसे स्वीकार करना होगा। प्रो. मुनि महेन्द्र कुमार ने आत्मा जीवन ओर चेतना के बारे में जैन परिप्रेक्ष्य को गहराई से समझाया। जैन अवधारणाओं का वैज्ञानिक अनुसंधान करना अति आवश्यक है ताकि हम उसके आधार पर दुनियाभर में आध्यात्मिक टेक्नोलॉजी का प्रशिक्षण दे सके।

उद्घाटन सत्र में एफ.एल.यू के अध्यक्ष प्रो. रोसिन बर्ग ने घोषणा की कि जल्द ही जैन अध्ययन केन्द्र स्थापित किया जायेगा। यह संवाद और महत्वपूर्ण सोच के लिए एक जगह होगी। जे.ई.आर.यु के अध्यक्ष प्रो. दीपक जैन ने आंगतुकों का स्वागत किया और जैन समुदाय की ओर से एफ.आई.यू. का आभार जताया ओर घोषणा की कि जे.ई.आर.एफ. जैन केन्द्र के विकास का समर्थन करेगा। अमरीका में भारतीय राजदूत तरणजीत सिंह ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा कि जैन दर्शन की विभिन्न अवधारणाओं का अनुसरण करने के लिए दुनिया एक बेहतर जगह होगी।

टी.डी.वी.पी. मॉडल को समझाया। अकादमिक समिति के अध्यक्ष डॉ. प्रताप संचेती के अनुसार अगले सत्र के मुख्य वक्ता पद्म विभूषण व सी.एस. आई.आर. के पूर्व महानिदेशक डा. आर. ए. मार्शेलकर रहे। इस सत्र में एफ. आई.यू. के. एसोसिएट्स प्रो. नेथन कैटज ने चेतना और जीवन के अन्त पर अपने विचार साजा किए। प्रो. वज्रन नेफे ने अपने टी.डी.वी.पी. मॉडल को समझाया।

सम्मेलन के फेडरेशन ऑफ जैन एसोसिएशंस ऑफ नार्थ अमेरिका (जैन) केलिफोर्निया विश्वविद्यालय डेविस मोहिनी जैन प्रेसिडेशिय का चेयर जैन विश्व भारती (आर लेंडो, न्यूजर्सी ह्यूस्ट ने और लंदन) और वर्धमान चेरिटेबल फाउण्डेशन सह आयोजक है। मुम्बई केस्पिरिचुअल टेक्नोलॉजी रिसर्च फाउण्डेशन वर्ल्ड जैन कंफडेरशन और अहमदाबाद के जैन एकेडमी ऑफ स्कॉलर्स नॉलेज पार्टनर है।

सम्मेलन के दूसरे दिन जैन दर्शन, क्वांटम फिजिक्स के संबंध और चेतना पर चर्चा हुई। अकादमिक समिति अध्यक्ष डॉ. प्रताप संचेती के अनुसार प्रथम सत्र में आचार्य महाप्रज्ञ की लिखित और अशोक

बाफना की संपादित पुस्तक संबंध परक अर्थशास्त्र चेतना पर आधारित विकास का एक नया मॉडल को जारी किया गया। प्रो. अतुल शाह ने कहा कि हमें सतत विकास के लिय शास्त्रों के गहन ज्ञान को लागू करने के लिये समुदाय का मार्गदर्शन करना होगा। प्रो. एस. आर. भट्ट ने कहा कि ब्रह्मांडीय नेटवर्क अनन्य श्वेता पर काम करता है। प्रो. सी. एस. बरला ने कहा कि हमें उपयोगिता को अधिकतम करने के लिए अर्थशास्त्र में लाभ ओर धन को अधिकतम करना सिखाया जाता है। जिससे भविष्य की पीढ़ियों के लिए कोई संधासान नहीं बचेगा। अतः जरूरतों पर लगाम लगाने की जरूरत है।

प्रो. दयानंद भार्गव ने कहा कि चेतना को विज्ञान के माध्यम से नहीं समझा जा सकता है। दूसरे सत्र में ही चेतना के जैविक और आध्यात्मिक विकास पर वक्ताओं ने अपनी बात रखी। प्रो. नारायणलाल कच्छारा ने कर्म के जैन सिद्धान्त को विस्तार से बताते हुए कहा कि कर्म हमारे भाग्य का एकमात्र निर्धारक नहीं है। प्रो. अशोक जैन ने एक केन्द्रीय जीव में चेतना की चर्चा कीं जयपथ जैन ने वैज्ञानिक दृष्टि से पशु चेतना, प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष अनुभूति की अवधारणाओं की जांच के बारे में बताया। यू.के. के डॉ. सतीश कुमार ने बताया कि अनेकांत बाद अहिंसा के जैन सिद्धान्त से एक ऐसा विज्ञान बनता है जो बिना किसी भेदभाव या हिंसा के सत्य की खोज को बढ़ावा देता है। प्रो. समणी चैतन्य प्रज्ञा ने जैन साहितय में चेतना की परिभाषा संरचना और कार्य को समझाया। प्रो. नरेन्द्र भण्डारी ने क्वांटम फिजिक्स के संदर्भ में अनेकान्तवाद के सिद्धान्त को समझाया। प्रो. ऐड्यू ब्रिजेत और डॉ. वोल्फोंगा ने भी अपने विचार साझा किये ।

सम्मेलन के तीसरे दिन कई सत्रों का आयोजन हुआ। डॉ. प्रताप संचेती के अनुसार सम्मेलन का पहला सत्र कर्म सिद्धान्त और चेतना का विकास दो भागों में विभाजित किया गया था। पहले भाग को प्रो. जेफरी लांग द्वारा संचालित किया गया जिसमें दिमाग के बिना भी चेतना मौजूद हो सकती है, चर्चा की गई। बिना दिमाग के जीवित प्राणी खुद को व्यक्त नहीं कर सकते फिर भी वे जीवन के आनन्द को अनुभव कर सकते है।

दूसरे भाग का संचालन डॉ. संचेती ने किया। यह सत्र राष्ट्रसंत परम गुरुदेव नम्रमुनि महाराज साहब की ओर से आयोजित किया गया था। इसमें वैज्ञानिक आपैर आध्यात्मिक रूप से चेतना और भ्रूण के विकास की व्याख्या की गई। प्रो. गैरी फ्रांसियों ने शाकाहार के बारे में बताया कि किसी जानवर से मिलने वाले किसी भी उत्पाद के उपयोग में हिंसा शामिल है। उन्होंने कहा कि हमें पौधों का उपभोग केवल न्यूनतम सीमा तक करना चाहिए। प्रो. पोखरना ने जैन धर्म में आत्मा की 47 शक्तियों की व्याख्या करते हुए उनकी तुलना आधुनिक विज्ञान के समान विचारों के सिद्धान्तों से की। अगले सत्र में आचार्य कनक नंदी ने आर्शीवचन कहे। डॉ. कीर्ति जैन ने अपने विचार रखे। डॉ. कल्याण गंगवाल ने आध्यात्मिकता में आहार की भूमिका और शाकाहार और शाकाहारी के महत्व के बारे में बताया। प्रो. ब्रायन डोनाल्डसन ने जैन दर्शन और डार्विन के अनुसार विकास की अवधारणा की तुलना की।

विज्ञान और जैन दर्शन पर आयोजित चार दिवसीय वर्चुअल अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के समापन सत्र में

मुख्य अतिथि राजस्थान पत्रिका समूह के चैयरमेन और प्रधान सम्पादक गुलाब जी कोठारी ने अपने सम्बोधन में कहा कि जीवन को समझना है तो पहले स्वयं को जानना होगा। चैतन्य अवस्था एक सपने की तरह है और चेतना इच्छा का एक ही रूप है। जन्म के समय आंख खुलती है तो सबसे पहले भूख का अहसास होता है जो कि इच्छा का ही रूप है। यदि इच्छा नहीं होगी तो कोई काम भी नहीं होगा। ज्ञान सूचना जानकारी या बुद्धि नहीं है, बल्कि विजन है। पश्चिम से आई हमारी शिक्षा पद्धति के कारण ज्ञान और दर्शन के दर्शन शास्त्र के अधीन बताया जाता है।

इससे पहले रशियन स्कॉलर डॉ. नतालिया ने मस्तिष्क, शरीर और चेतना के पहलुओं पर प्रकाश डाला, वहीं यू.के. के मेहुल प्रो. क्रिस्टोफर मिलर, प्रो. मणि महेन्द्र कुमार, प्रो. समनि चैतन्य प्रज्ञा एवं जोनायन डिक्स्टेन ने मोक्ष, कर्म और विज्ञान से जुड़े पहलुओं पर प्रकाश डाला।

डॉ. कोठारी ने स्पष्ट किया कि इच्छा के दो रूप होते है, एक पुराने कर्मों से जुड़ी होती है। जिसे रोका नहीं जा सकता और दूसरी विवेक पर निर्भर होती है। उन्होंने कहा कि जैनवाद और वेद दोनों दर्शन–ज्ञात–चरित्र में विश्वास रखते हैं। शरीर एक वाहन है और चेतना उसमें ड्राईवर का कार्य करती है।

चेतना में ब्रह्म व आत्मा का अस्तित्व बनाए रखने की शक्ति है। चेतना हर बार शून्य या अन्धेरे की सीमा तक ले जाती है और बुद्धि शरीर को कार्य करने के लिए आदेश देती है। चेतना में चारों ओर अंधेरा और खालीपन होता है, जहां ब्रह्म और चेतना मिलते हैं दोनों साथ–साथ चलते हैं, लेकिन एक समय पर एक को ही देख सकते हैं। जब आप इच्छा विहिन होते है तो आपके पास माया नहीं होती है बल्कि आप ब्रह्म है। ब्रह्म ही दुनिया का सृजन करता है और इसे ही विवर्त कहा जाता है।

आज के संदर्भ में जैन अवधारणाओं का उपभोग कर वैज्ञानिक अनुसंधान व प्रयोगों के संचालन पर यह अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है और आने वाले समय में विश्व समुदाय और भारत देश अच्छे परिणामों की ओर आगे बढ़ सकते है। वैदिक ज्ञान पर हमारे देश में ऐतिहासिक दृष्टि से कई प्रमाण हमारे सामने है। वैदिक और जैन अवधारणाओं में कई समानताएं है। जैन अवधारणाओं पर विश्व के वैज्ञानिकों द्वारा कई शोध प्रकाशित किये है।

यहाँ तक जैन पौराणिक ग्रन्थों का प्रश्न है इनका अध्ययन एवं शोध बहुत कम ही सामने आये है। अधिकतर शोध केवल मात्र महावीर भगवान के समय से सम्बन्धित और उनके साहित्य । ऐतिहासिकता को ध्यान में रखते हुए विश्व के सामने लाये गये है। जैन धर्म के 24 तीर्थंकरों के प्रथम चौबीसी को ध्यान में रखते हुए, उनके समय एवं संदर्भ पर अध्ययन/शोध होते है तो निश्चित रूप से जैन अवधारणाएँ अधिक प्रभावशाली होगी। विशेष रूप से आज के वर्ष 2020–21 के महामारी के समय में विश्व को सकारात्मकता की और आगे बढ़ने में बहुत बड़ा योगदान हो सकता है।

विज्ञान एवं जैन दर्शन पर जो अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन विदेश की भूमि पर होते आये है उन्हें यदि भारत भूमि पर आयोजन किये जाते है तो जैन अवधारणाओं पर अधिक लाभ हो सकता है। अपने यहां के

पौराणिक ग्रन्थों साहित्य एवं अध्ययनों का उपयोग किया जा सकता है। राजस्थान पत्रिका अपनी बहुत बड़ी भूमिका निभा सकता है और भारत पुनः विश्वगुरू की ओर बढ़ सकता है।

उपरोक्त अन्तर्राष्ट्रीय जैन सम्मेलन का निष्कर्ष पर पहुंचा जाए तो यह स्पष्ट होगा कि अभी अनुसंधान की आवश्यकता है। यहां पर यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि विश्व में जैन धर्म ही सबसे प्राचीनतम् धर्म है। एक वक्ता ने वैदिक धर्म व जैन धर्म को समान बताकर इतिहास के साथ न्याय नहीं किया। वे सदस्य जैन धर्म को महावीर से जानते हैं या मानते हैं। जैन धर्म साहित्य का अध्ययन किया जाए तो महावीर भगवान तो वर्तमान चौबीसीं के 24वें तीर्थंकर हुए है। इस कड़ी में 23 तीर्थंकर हो चुके है। इस चौबीसी से भी पूर्व में अनन्त चौबीसी हो चुकी है जो मनुष्य भगवान महावीर से जैन को जोड़ने की भूल करते हैं क्योंकि उनके धर्म की उत्पत्ति ही 2500 वर्ष, 600 वर्ष, 250 वर्ष व 2500000 वर्ष पूर्व हुए है। उनकी सोच यही इसी समय से प्रारम्भ होती है। यहां पर जैन धर्म की कुछ वास्तविकता व तुलनात्पकता का वर्णन है जिसके लिए आप अनुसंधान करने को मजबूर करेगा।

जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान से नवें तीर्थंकर श्री सुविधिनाथ भगवान तक विश्व में एक ही जैन धर्म विद्यमान था, उसके बाद संघ से विच्छेद होने से लोगों ने अपने अपने विचारों के अनुसार, धनोपार्जन के अलग अलग विधि में जैसे कर्म–काण्ड, हवन आदि की प्रथा होकर नूतन धर्म का प्रादुर्भाव प्रारम्भ होने लगा।

जैन धर्म में काल को दो भागों में विभाजित किया और प्रत्येक भाग को 6 भागों में विभाजित हुए, प्रत्येक काल के भाग की आयु भिन्न–भिन्न बताई गई है जिसकी गणना लाखों वर्षों से भी अधिक होती है, उसी प्रकार से वैदिक धर्म से चार भागों में विभाजित है जिसमें चौथा युग कलयुग कहलाता है जो वर्तमान में चल रहा है। कलियुग के बारे में वेद, पुराण में स्पष्ट किया कि इसकी उत्पत्ति 436 वर्ष ई. पूर्व हुई थी और भविष्य में 4 लाख से अधिक वर्ष तक रहेगा इस अवधि में संसार में सभी प्रकार के पाप, अत्याचार, अधर्म, शोषण, हत्या सभी संभव है और व्यक्ति 20 वर्ष तक की आयु होगी।

इस प्रकार का कथन जैन धर्म के समय चक्र में इसके पूर्व किया जा चुका है कि और छठे आरे में मनुष्य की लम्बाई केवल 18 इंच होगी और आयु भी 20 वर्ष ही होगी, इससे सिद्ध है कि जैन धर्म प्राचीन है। दूसरा उदाहरण यह है कि वेद, पुराण में हमारे वर्तमान चौबीसी के 24 तीर्थंकरों के नाम का 20 तीर्थंकरों के नाम का संदर्भ दिया है, इससे यह कहा जा सकता है कि जैन तीर्थंकरों का नाम जैन साहित्य में या समाज में प्रचलित थे तब ही वेद में संदर्भ दिए है।

यहां यह स्पष्ट भी करना चाहूँगा कि मूर्तिपूजा का प्रचलन प्रारम्भ प्राचीनकाल से हो रहा है और जैन धर्म में शास्त्रों की रचना भी मूर्तिपूजक समाज से ज्ञानियों ने की जो प्राचीनकाल में प्राकृत, संस्कृत, ब्राह्मी लिपी में ताड़–पत्र पर लिखे गए थे जो आज भी विद्यमान है। इन्हीं ग्रन्थों का अन्य सम्प्रदाय के ज्ञानियों ने अपने विचारों के अनुसार व नाम की लोलुपता के अनुसार गए सम्प्रदाय की उनके वहां पर स्थापित किए।

उन सभी शास्त्रों को थोड़ा बहुत परिवर्तन कर अपने नाम से रचना बताई। प्राचीनकाल में जैन धर्म अपनी प्रकाष्टा पर था वहाँ आध्यात्मिकता, तपस्वियों, ज्ञानियों, शौर्यवीरता में अग्रणी था और सम्पूर्ण विश्व में अपने सिद्धान्तों का प्रचार होता रहा।

मथुरा कंकाली टीला से प्राप्त मूर्तिया (खनन में), जापान की पहाड़ियों पर प्राप्त मूर्तियों से प्राचीनकाल की वैज्ञानिकता, सहिष्णुता, मैत्री सह भाव, रहन–सहन आदि की ओर अग्रणी था। जो वर्तमान में किसी का समय नहीं है वह पैसे अर्जित करने में सब कुछ भूलकर अपनी दौड़ में लगा है।

कुछ विदेशी आक्रमणकारी ने धर्म व साहित्य को नष्ट करने का प्रयास किया वे काफी सफल हुए है फिर भी जैन धर्म अमर व अजर है, इसके अतिरिक्त कुछ विदेशी शासकों ने हमारी मुख्य ग्रन्थ जो हस्तलिखित थे वे अपने साथ ले गए जिसकी अनुमानतया संख्या निम्न प्रकार है :

नाम देश	पुस्तकालय की संख्या	एक पुस्तकालय में साहित्य	अनुमान हस्तलिखित
लन्दन	1500	1500	
जर्मन	5000	5000	
अमेरिका	500	200000	
फ्रांस	1111	12000	
रूस	1500	21000	
इटली	4500	60000	

इन्हीं साहित्य का अध्ययन व अनुसंधान कर विदेशी अपने अपने देश के नाम से अविष्कार कर रहे हैं। ऐसा सम्मेलन भारत में क्यों नहीं किए जाते ? जिससे भारत के लोगों की प्राचीन जैन धर्म की वास्तविकता व सच्चाई बारे में ज्ञान हो सके और वि.सं. 19 वीं शताब्दी में मूर्तिपूजक के आचार्य श्री धर्मसूरि जी म.सा. राजस्थान के जोधपुर शहर में तीन दिवसीय सम्मेलन आयोजित किया था। जिसमें विदेशी विद्वानों ने भाग लिया और अन्त में जर्मनी के डा. जोकोबी, स्टीफेन्स ने कहा कि जैन धर्म को वास्तविक रूप से आज समझा है।

वर्तमान में जैन धर्म के जो प्रमुख 5 सिद्धान्तों को अनेकान्तवादी अपना लेंगे तो विश्व में कोई भी प्राणी दु:खी नहीं हो सकता ।

1) Apology Day क्षमायाचना
2) Ahinsa अहिंसा
3) Anekantvad अनेकान्तवाद
4) Aahar Charya आहार चर्या
5) Aparigrah अपरिग्रह

उक्त पांचों सिद्धान्तों के संक्षिप्त में वर्णन करेंगे :

1) **क्षमा याचना :** क्षमायाचना दिवस वर्ष में एक बार आता है, लेकिन इस दिन जैन क्रिया में सामाजिक क्रिया में प्रत्येक प्राणी को मन–वचन व काया से क्षमा करते हैं और चाहते है अर्थात् मन से, वचन स व शरीर से किसी को कष्ट पहुंचा हो तो क्षमा मांगते है, सही रूप से वेमन्यस्ता समाप्त हो जाती है, शक्ति मिलती है।

2) **अहिंसा :** जैन धर्म में एक छोटे से जीव (चींटी) को मारना या अन्य किसी प्राणी को दु:ख पहुंचाना भी हिंसा कहलाती है। इसका पालन करने से प्राणी चिंतामुक्त रहता है।

3) **अनेकान्तवाद :** इसमें मनुष्य दूसरे के विचारों को ध्यान में रखते हुए कार्य करें तो सभी प्रकार के झगड़े, मनमुटाव से छुटकारा प्राप्त होंगे, जैसे भाई, पत्नी क्या चाहते है ? उनके विचार जानकर कार्य करें तो कोई झगड़ा नहीं, यदि आप ऐसा नहीं करते हैं तो मन मलिता से घिरा रहेगा, काम में मन नहीं लगेगा, अनेकान्तवाद के रूप में रह जायेंगे।

4) **आहार :** आहार–शाकाहारी रहना, रात्रि भोजन न करना, पानी छानकर पीना आदि का पालन करने से किसी प्रकार के रोगों से मुक्त रहेंगे, क्योंकि एक समय के भोजन व दूसरे समय के भोजन के बीच पर्याप्त दूरी से वात–पित आदि रोग की उत्पत्ति नहीं होगी।

5) **अपरिग्रह :** आवश्यकता के अनुसार समान रखना चाहिए, इससे अधिक होने से उसको संभालना उसकी चिन्ता होगी, दूसरे की सम्पत्ति को देखकर ईर्ष्या की भाव उत्पन्न होगा, यदि आवश्यकता से अधिक है तो इन्हें छोड़ देना चाहिए, दान में देना चाहिए ओर चिन्तामुक्त हो जाए।

ये पांचो सिद्धान्तों का ही नहीं ये एक जीवन का भाव है, यदि इसका अध्ययन के लिए विश्व की विभिन्न विश्वविद्यालय में लाईफ स्टाईल के रूप में पढ़ाया जा रहा है जैसे ऑक्सफॉर्ड, कैम्ब्रिज में .... आदि।

यहां विद्यालयों में धर्म के साथ लाईफ स्टाईल (जीवन–चर्या) को भी पढ़ाया जा रहा है। प्राध्यापकों, अनुसंधानकर्ता का मानना है कि धर्म के सिद्धान्तों को जीवन के साथ जोड़ दिया जाए तो विश्व में कोई भी प्राणी दु:खी नहीं रहेगा, यहां एक उसके भी हर की अशुद्धियां नष्ट जो जाएगी।

अत: जैन विद्वानों से अनुरोध है कि जैन धर्म रूपी पनों को छोड़कर जड़ों तक (अनुसंधान) तक पहुंचने का प्रयास करना चाहिए। अपनी ज्ञान तो सामान्य को भी जानकारी है।

जैन धर्म का इतिहास व पुरातत्व

The Real Universe कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हरिसत्य भट्टाचार्य जी दर्शन शास्त्र न्याय ग्रन्थ आदि विषयों के ज्ञाता थे, वे पढ़ते रहते थे, वे अपना समयानुकल पुस्तकालय में जाकर अनेक विषयों के पुस्तकों का अध्ययन करते थे। अध्ययन करते समय उनको जैन धर्म के आचार्य श्री वादिदेव सूरी के द्वारा रचित प्रमाण नव तत्व, आकारा आदि पुद्गल है। एक जीव को अलग देखने वाला आकार आदि। प ु द ् ग ल आदि का पढ़ना, इससे स्वर व व्यंजन के आकार वो पुद्गल है। यानि नोन मेटर बन रहे हैं जबकि अन्य साहित्य में मेटर बताया है। उन्होंने जितने भी दर्शनशास्त्र पढ़े, पहले पढ़ने वाले इस दौरान, रेडियो व टेपरेकॉर्ड की खोज हो चुकी थी इससे उनको जानने की जिज्ञासा बनती है और जैन धर्म के स्वरूप को पढ़ने लग गए। जगह–जगह पुद्गल के स्वरूप की बात पुद्गल के लक्षण रूप रस गंध स्पर्श शब्दादि की बात पुद्गल के अचेतन होने के बाद है। प्रोफेसर को यह महसूस हुआ कि जब रेडियो और टेपरिकॉर्डर नहीं था तब भगवान महावीर स्वामी ने ही कहा कि यह नोन मेटर है।

महावीर स्वामी को केवल ज्ञानी कहते हैं। उन्होंने प्रबंध लेख (थिसीस) लिखने का दिन आया तो उन्होंने जैन दर्शन को ही चुना, उन्होंने यह समझा कि जब अणु, जब परमाणु का वर्णन आगे तक उनको उनसे पूछा गया कि जैन दर्शन में द्रव्य की महिमा का एवं स्वरूप का वर्णन करने वाला ग्रंथ सागर जिसमें विशाल है। मैंने तो इसमें थोड़ा ही लिखा है परमाणु इतने सुक्ष्म है कि वो नहीं देख पाये माईक्रोस्कॉप भी नहीं देख पाये। सिर्फ पानी को ही देख लिजिए लेकिन जैन दर्शन ने यह साबित कर दिखाया, पानी दो चीजों से मिलकर बनता है। एक तो हाईड्रोजन व ऑक्सीजन से मिलकर बनता है। यह अमेरिका द्रव्यानुयोग – गणितानुयोग की तरह ही माना गया है। इस विषय पर आचार्य भुवन भानु सुरिश्वर जी महाराज सा. के समुदाय के आचार्यश्री हेमरत्न सुरिश्वर जी महाराज सा. के प्रशिष्य/शिष्य में श्री चारित्र रत्नविजय जी महाराज सा. ने पांच खण्डो में काफी विस्तार व सरल रूप से समझाते हुए वर्णन किया है। इन पुस्तकों में चित्रों द्वारा भी समझाया गया।

श्री वादीदेव ने अधिक आयु में दीक्षा ली तो उन्होंने एक दिन अपने गुरूजी को कहा कि मुझको भी कुछ दो याद करने के लिए तब गुरूजी ने एक श्लोक याद करने के लिए दिया। उस श्लोक को तेज आवाज करके याद करने लगे उससे शिष्यो ने शिकायत की कि तेज आवाज से हमको बाधा आती हे तब गुरूजी ने उनको बुलाकर कहा कि तुम नवकार मंत्र का जाप करो तब उन्होंने संकल्प लिया कि वह बाहर बैठकर याद करने लगे। बाहर याद करते हुए देखने पर अन्य शिष्य हंसी उड़ाकर यह कहते कि मुसल में भी फूल उगता है क्या ? तब उन्होंने अपने संकल्प को जारी रखा उस समय सरस्वती माता प्रकट होकर प्रसन्नता की और उनको वरदान लेने के लिए बोला तब उन्होंने आगम की विद्या याद हो जावे और वो हो गई। देवी अदृश्य हो गई और उनको एक मुसल लाकर दे दिये महाराज सा. ने उसमें फूल डाले और फूल उग गया ये देखकर सब हैरान हो गये। फिर गुरूदेव ने उनकी प्रशंसा की ओर उनको केवल ज्ञान प्राप्त हो गया।

मिस्र के विद्यार्थियों ने और वहां के पुरातत्व वेताओं ने काफी गहराई में खनन एवं खोज की है। मिस्र के खनन में जो भग्नावेश पाए गए, उसमें यह देखा गया कि जो मूर्तियां मिली है वे जैन मुनि की है। वे उस समय में भी जूते नहीं पहनते थे और शरीर पर कपड़े पहने हुए थे, इससे यह सिद्ध होता है कि दिगम्बर समाज की स्थापना बहुत बाद में हुई है और यह भी सिद्ध होता है कि जैन धर्म सभी जगह प्रचलित था।

भूले बिसरे जैन श्वेताम्बर मन्दिर देश में स्थापित है, जो पूर्व में वर्णित भी है :

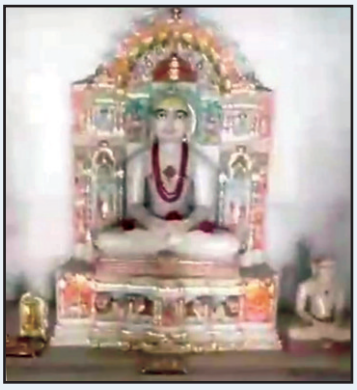

श्री मल्लीनाथ जी

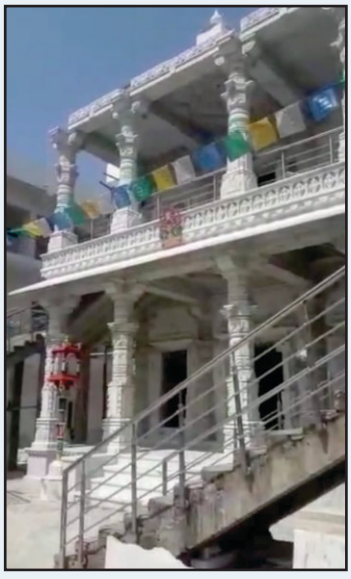

श्री शीतलनाथ जी
चार कल्याणक मन्दिर

श्री मल्लीनाथ–नमीनाथ जैन अष्ठ कल्याणक मन्दिर

मैथीली नगर (सीतामढ़ी), बिहार

प्रत्येक तीर्थंकर के पांच–पांच कल्याणक होते हैं, च्यवन, जन्म, दीक्षा व केवल्य ज्ञान, निर्वाण। तीर्थंकर के जन्मस्थली के बारे में जानकारी ली, अनुसंधान करने पर बीकानेर के अभय जैन पुस्तकालय में ताड़–पत्र व यंत्र बने हुए मिले, जिस आधार में भदिलपुर व मिथिला का नाम सामने आया तब बीकानेर के श्री ललित भाई नाहटा तीर्थयात्रा करते हुए पाया कि श्री शीतलनाथ भगवान की जन्मस्थली भदिलपुर रही है और मिथिला नगरी में श्री मल्लिनाथ भगवान व श्री नमीनाथ भगवान की जन्मस्थली रही है । यहां पर्याप्त जानकारी व भग्नावेशा के आधार पर श्री ललित कुमार नाहटा बीकानेर हाल दिल्ली ने इन तीर्थस्थलों का निर्माण करवाकर भदिलपुर में भगवान शीतलनाथ के जन्म, च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवल्य ज्ञान में निर्माण कर प्रतिमा के चारों कल्याणक की प्रतिष्ठा करवाई, अतः यह 4 कल्याणक भूमि कहालाती है ।

इसी प्रकार से मिथिला नगरी में भी वर्ष 2020 में मंदिर बनवाया। समारोह सहित श्री मल्लीनाथ भगवान के 4 कल्याणक व भगवान नमिनाथ के चार कल्याणक के मंदिर बनवाकर दिनांक 19.01.2020 को प्रतिमा विराजमान कर और दिनांक 29.01.2020 से 02.02.2020 तक समारोह सहित विधि विधानपूर्वक इन दोनों प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा आचार्य श्री पीयूष सागरसूरी जी म. सा. की निश्रा में प्रतिष्ठा करवाई। दोनों मंदिर एक ही स्थान पर बने हैं। श्री मल्लीनाथ भगवान का मंदिर भूतल पर व श्री नमिनाथ भगवान का प्रथम मंजिल पर है। एक साथ दोनों ही भगवान अष्ट कल्याणक हुए हैं इसलिए इसको अष्ट कल्याणक तीर्थ भी कहते हैं। इस तीर्थ का निर्माण ललित कुमार व आशाबेन नाहटा द्वारा करवाया गया है। यहां पर श्री हरकचन्द जी नाहटा की मूर्ति भी स्थापित कराई गई। आचार्य भगवंतों की उपस्थिति में समाज द्वारा श्री ललित कुमार नाहटा को 'तीर्थ रत्न' की उपाधि से अलकृंत किया गया है।

श्री भदीनपुर जैन मंदिर, बिहार

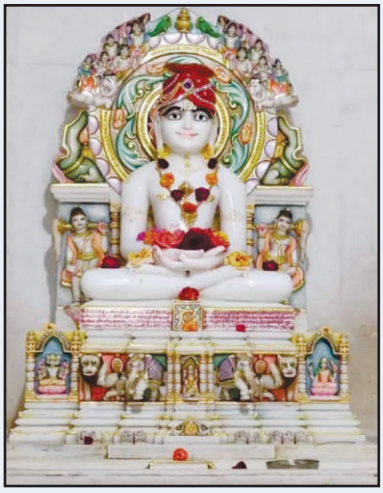

श्री भदीनपुर जैन मंदिर, बिहार

श्री पार्श्वनाथ भगवान का मन्दिर माण्डाशाह व साढ़ा सा का मंदिर, बीकानेर, चिन्तामणि पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा, बीकानेर

संदर्भित पुस्तकों की सूची

1)	जैन सर्व संग्रह तीर्थ दर्शन	आनन्दजी कल्याणजी पेढ़ी
2)	जैसलमेर पंच तीर्थी का इतिहास	पू. मुनिराज प्रकाश विजय जी म.सा.
3)	गिरिराज महिमा	
4)	आदर्श काव्य सुधा	
5)	नवकार मंत्र – महामंत्र	श्री प्रकाश संचेती
6)	नवपदओली आराधना	आचार्य श्री नित्यानंद सूरीश्वर जी म.सा. के शिष्य श्री मोक्षनन्द विजय जी के प्रवचन का सार
7)	आत्म विज्ञान आत्म विश्लेषण	लिटिल स्टार–2 (9.40 Mg Star) द्वारा प्रसारित प्रवचन सार – डॉ. सोहनराज तातेड़
8)	जैन तीर्थ लेख संग्रह	जैन प्रार्थना समाज ट्रस्ट, चैन्नई
9)	जालोर एवं स्वर्णगिरी दुर्ग का सांस्कृतिक इतिहास :	सोहनलाल पाटनी

पुस्तक प्रकाशन में काफी सावधानी बरती गई है,
तथापि मानवीय भूल होना स्वाभाविक है,
अतः किसी प्रकार की गलती के लिए
आप सभी से सविनय

मिच्छाम दुक्कड़म

मोहनलाल बोल्या